अन्याय की व्यवस्था

मध्य प्रदेश के मुलताई में पारधियों का हिंसापूर्ण विस्थापन और उनकी बदहाली

यौन उत्पीड़न पर सरकारी पर्दा

राजकीय दमन और लैंगिक हिंसा के खिलाफ महिलाएं **(WSS)**
पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स **(PUDR)**, दिल्ली
2013

विषय सूची

भूमिका

अध्याय 1: जाति उभार की राजनीति

अध्याय 2: विस्थापन और गरीबी

अध्याय 3: सी.बी.आई. के आरोप पत्रों का विश्लेषण

अध्याय 4: औरतों का शरीर जंग का मैदान

निष्कर्ष

परिशिष्ट

1. कानूनी प्रक्रिया, पुलिस और सी.बी.आई. की जांचें तथा गुमशुदगी की घटनाओं का कालक्रम
2. डॉ. मीना राधाकृष्णा द्वारा तैयार 'पारधियों से संबंधित घटना की रपट, मध्य प्रदेश, 9 से 11 सितम्बर 2007, अधिसूचित, घुमन्तु और अर्द्ध–घुमन्तु जनजाति आयोग' के कुछ अंश
3. अधिसूचित जनजातियां
4. पारधी
5. पारधियों के वर्गीकरण की गड़बड़ी

भूमिका

9 सितम्बर 2007 को दक्षिणी मध्य प्रदेश में स्थित चौथिया गांव के पारधीढाना को सैकड़ों स्थानीय किसानों द्वारा तहस–नहस कर दिया गया। उपद्रवी आदमियों द्वारा पारधीढाना में लूटपाट करने के बाद वहां के पक्के मकानों को गिराते और उनकी झोंपड़ियों को आग लगाते समय पुलिस और उच्च प्रशासन सहित राज्य मशीनरी के कई सदस्य वहां मौजूद थे। इलाके के वर्तमान विधायक सहित कई राजनैतिक नेताओं ने ये कहते हुए इस कार्यवाही में सक्रिय रूप से भाग लिया कि कैसे पारधीढाना के पूर्व रहवासियों, पारधियों के एक समूह, के भाग्य में यही बदा था, और उन्होंने उपद्रवी भीड़ की इस कार्यवाही को जायज़ ठहराया। इसे उचित ठहराए जाने की मुख्य वजह हाल ही में महाराष्ट्र के किसी पारधी द्वारा एक स्थानीय किसान महिला का बलात्कार कर हत्या कर देना बताई जा रही थी। पारधी एक अधिसूचित जनजाति है जिनकी 'आपराधिक' प्रकृति के बारे में धारणाएं, पारधीढाना के सैकड़ों रहवासियों को विस्थापित करने और उनके घरों को ध्वस्त करने के लिए पर्याप्त कारण लग रही थीं।

पारधीढाना को नेस्तानाबूद किए जाने से एक दिन पहले वहां के रहवासियों को पुलिस द्वारा उनके घरों से ज़बरन हटा दिया गया था और छह साल बीत जाने के बाद भी वे चौथिया गांव वापस नहीं जा सके हैं। सरकार ने विस्थापित लोगों को बहुत कम सुविधाएं उपलब्ध कराईं। उन्हें पहले भोपाल में और फिर दो समूहों में बांटकर, एक समूह को जंगल की ज़मीन के एक टुकड़े पर और दूसरे को बैतूल में कभी–कभार इस्तेमाल होने वाले खेल परिसर में बसाया गया। अक्टूबर 2010 में उनका राशन बन्द कर दिए जाने पर जंगल वाला समूह बैतूल चला गया और अब झुग्गियों में रह रहा है। आखिरकार दूसरे समूह को भी खेल परिसर से बाहर फेंक दिया गया और अब वो भी बैतूल में झुग्गियों में रह रहा है। सभी विस्थापित पारधियों ने वो सब कुछ गंवा दिया है जो कभी उनके पास पारधीढाना में था, और अब उनमें से बहुत से बैतूल रेलवे स्टेशन एवं ट्रेनों में भीख मांगकर गुज़ारा कर रहे हैं।

लेकिन विस्थापन और विध्वंस इस कहानी का केवल एक पक्ष है। विध्वंस के घंटे भर के भीतर, दो जघन्य अपराध और भी घटित हुएः पहली घटना में, पारधीढाना के दो लोगों, बोन्द्रु एवं डोडेलबाई की बेरहमी से हत्या कर दी गई, चश्मदीद गवाहों ने आरोप लगाया कि डोडेलबाई के

साथ बलात्कार भी हुआ था। दूसरी घटना में, दस महिलाओं ने आरोप लगाया कि विध्वंस से पहले जब पुलिस वाले ज़बरन पारधीढाना को खाली करा रहे थे, उन्हें रोक लिया गया था और फिर उनके साथ सामूहिक बलात्कार किया गया था। जब डोडेलबाई और बोन्द्रु की हत्या की जांच की गई, तो केवल एक ही व्यक्ति को दोनों अपराधों के लिए दोषी ठहराया गया!

तथ्य यह है कि आन्तरिक रूप से विस्थापित व्यक्ति होने के बावजूद पारधी लगातार गरीबी को भुगत रहे हैं यानी कि प्रशासन ने उनकी हालत पर अपनी आंखें मूंद रखी हैं। स्थानीय नेताओं का मामला और भी बदतर है, जिन्होंने, कुछ मामलों में, इस इलाके में पारधी–विरोधी भावना पैदा कर वोट हासिल किए हैं। पिछले दो विधानसभा चुनावों से अधिसूचित जनजातियों की छवि स्थानीय 'अल्पसंख्यक' समुदाय के रूप में गढ़ी जा रही है जो बहुसंख्यक समुदायों के संसाधनों में से हिस्सा बंटाती है। 2003 से 2007 के बीच इस इलाके में अधिसूचित जनजातियों के 11 लोगों को पत्थर मारकर या पीट–पीटकर मार डाला गया।

एक तरफ तो ऐसा लगता है कि प्रशासन सक्रिय रूप से इस विध्वंस की स्थितियां तैयार करने की योजना बनाने में लिप्त था, दूसरी तरफ पुलिस लगातार निष्क्रिय बनी रही। स्थानीय कार्यकर्ताओं, वकीलों और पत्रकारों के निरंतर प्रयासों के बाद केवल न्यायपालिका ही विस्थापित पारधियों के बचाव के लिए आगे आई। अगस्त 2009 में, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने विध्वंस की सी.बी.आई. जांच का आदेश दिया। परन्तु, 2012 के मध्य में सी.बी.आई. द्वारा दायर की गई जांच रपट में चतुराई से विध्वंस और हत्याओं के मामले में दोषियों के खिलाफ आरोपों को कम कर दिया गया, और बलात्कार के आरोपों को नज़रअंदाज़ कर दिया गया। पारधियों के दरिद्रीकरण और न्याय से वंचित होने के अनुभवों के संदर्भ में दो संगठनों, राज्य और लैंगिक हिंसा के खिलाफ महिलाएं (WSS) और पीयूडीआर, ने बैतूल के विस्थापित पारधियों से मिलकर हालात जानने का फैसला किया। यह रपट उसी जांच का परिणाम है। यद्यपि टीम ध्वस्त किए गए पारधीढाना जाने और विध्वंस में शामिल किसानों से बात कर पाने में असमर्थ रही, लेकिन टीम ने बैतूल में प्रशासन, पुलिस और नागरिक समाज के सदस्यों के साथ मुलाकात की।

सी.बी.आई. के आरोप पत्रों के बारीक अवलोकन और विश्लेषण तथा जांच के आधार पर यह उभर रहा है कि इस मामले में योजनाबद्ध तरीके से न्याय की हत्या हुई है। उच्च न्यायालय के निष्पक्ष फैसले के बावजूद, विस्थापित पारधियों को सुनियोजित तरीके से कंगाली की ओर धकेल दिया गया है। यह रपट ऐसे कई तरीकों का विवरण देती है जिनके द्वारा यह घटित हुआ है।

जुलाई 2013

अध्याय 1

जाति उभार की राजनीति

सितम्बर 2007 में दक्षिणी मध्य प्रदेश के चौथिया गांव में पारधीढाना के विध्वंस से उस तरीके का पता चलता है जिसमें कि अधिसूचित जनजातियों के खिलाफ हिंसा केवल असमानता के सांस्कृतिक विचारों का ही नहीं बल्कि इस इलाके में मध्य जाति के उभार की बहुत ही वास्तविक राजनाति का परिणाम होती है जिसके तहत वे निम्न जाति और जनजातियों के खिलाफ प्रचलित पूर्वाग्रहों का इस्तेमाल अपने फायदे के लिए करते हैं (अधिक जानकारी के लिए देखें परिशिष्ट 3 'अधिसूचित जनजातियां')।

अपने विस्थापन से पहले, चौथिया गांव के पारधीढाना के पारधी इतने बदहाल नहीं थे। वन विभाग के निरंतर भय के बावजूद, वे पड़ोसी जंगलों में पक्षियों का शिकार करने के अपने परम्परागत पेशे का काम करते थे और मुर्गियां एंव बकरियां भी पालते थे। पारधीढाना के अधिकतर रहवासियों को खेतों में खेत–मज़दूरी का काम मिल जाता था और कुछ कृषि भूमि को पट्टे पर लेकर नकदी फसल भी उगाते थे जिसमें कि सोयाबीन सबकी पसंद की फसल थी (पारधी समुदाय पर अधिक जानकारी के लिए देखें परिशिष्ट 4 'पारधी')।

विस्थापित पारधियों में से कुछ 2007 के पहले से भी दशकों से चौथिया गांव में रह रहे थे। पारधीढाना में 11 परिवारों के पास पट्टे और पक्के मकान थे, जबकि तीन परिवारवालों ने दावा किया कि वे अपने पक्के मकानों के लिए सम्पत्ति कर का भुगतान करते रहे थे, यद्यपि उनके पास इससे सम्बन्धित कोई कागज़ात नहीं मिले थे। जिन 11 परिवारों के पास पट्टे और पक्के मकान थे, उनके सदस्यों ने बताया कि उनके दादा–दादी उस समय चौथिया में आकर बस गए थे जब यहां की ज़मीन मुलताई[1] के किसी बेलदार की हुआ करती थी। उसके बाद यह ज़मीन एक किसान को बेच दी गई जो अभी भी चौथिया में ही रहते हैं और जिनके साथ पारधियों के सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध हैं। उनमें से कुछ ने कहा कि पहले, यदि वे निजी खेत पर अपनी झोंपड़ी बना लेते थे तो भी उन्हें किसानों से इस तरह की तीव्र शत्रुता का सामना नहीं करना पड़ता था।

तभी से पारधी उसी ज़मीन में रहते आ रहे थे, और अंततः, 1995–96 में इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत पक्का मकान बनाने के लिए उन्हें राशन कार्ड, पट्टे एवं पैसे भी मिले। समय के

साथ, शादी के माध्यम से बसाहटें बढ़ने लगीं और पारधीढाना चौथिया गांव के एक खण्ड की तरह स्वीकार किया जाने लगा। यहां तक कि यहां से एक प्रतिनिधि पंच भी था। चौथिया में एक प्राथमिक स्कूल भी स्थापित किया गया जिसमें अधिकांश पारधी बच्चे पढ़ने जाया करते थे।

विडंबना यह है कि पारधीढाना के विध्वंस के बावजूद, गांव के इस भाग से एक पंच अभी भी ग्राम पंचायत की सदस्य हैं। अभी रत्नाबाई पंच हैं, लेकिन हमें सूचित किया गया कि ग्राम पंचायत सुनिश्चित करता है कि विस्थापित पारधियों को कभी भी पंचायत बैठकों के बारे में पता नहीं चले। उन्हें किसी भी निर्णय प्रक्रिया में शामिल नहीं किया जाता।

उनके पट्टों और बसी हुई खेती में भागीदारी के बावजूद, पारधीढाना के रहवासियों को आपराधिक पहचान से पीछा छुड़ाना मुश्किल हो रहा था। 2012 के आखिर में जब यह जांच टीम बैतूल में विस्थापित पारधियों से मिलने गई तो उनको गैर–पारधी स्रोतों द्वारा पारधियों के नकली सोना बेचने और जुआ का अड्डा चलाने में भागीदारी जैसी कई बातें सुनने को मिलीं। बहुत ही मामूली आर्थिक स्तर पर होने के बावजूद उन पर खेतों से सब्ज़ियां चुराने जैसी गतिविधियों में लिप्तता की वजह से किसानों के बीच 'आतंक' फैलाने का आरोप भी लगाया गया। प्रशासन द्वारा बहुधा दिए जाने वाले उदाहरणों में से एक था कि एक किसान ने कथित तौर पर पारधियों को उसकी खड़ी फसल काटकर ले जाते हुए पाया। हालांकि, इस तरह की घटनाओं के लिए कोई पुलिस शिकायत या विवरण मौजूद नहीं है। इन गतिविधियों में पारधीढाना के कुछ रहवासियों की भागीदारी सच हो सकती है, परन्तु तथ्य यह है कि इस इलाके – दक्षिणी मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र के उत्तरी ज़िला अमरावती – में जुआ एक प्रमुख व्यावसायिक गतिविधि बनी हुई है, न केवल पारधियों में बल्कि आबादी के हरेक वर्गों में। चूंकि जुआ के साथ अवैधता जुड़ी हुई है, इसलिए इसके फैलाव के बारे में निराधार जानकारी से ज़्यादा कुछ नहीं पाया गया।

फिर, पारधीढाना में जुआ का तथाकथित अड्डा होना एवं इसके रहवासियों का तथाकथित 'अपराधी' चरित्र का होना, पूरे इलाके को ध्वस्त करने, सैकड़ों को विस्थापित करने और लोगों के बलात्कार एवं हत्याओं के लिए पर्याप्त कारण क्यों बन गया?

उत्तर इस तथ्य में प्रतीत होता है कि पिछले कुछ वर्षों में खानाबदोश पारधियों और अन्य अधिसूचित जनजातियों के चोर होने वाली धारणा को अधिकांश राजनीतिक दलों द्वारा भुनाया गया है और चुनाव जीतने के लिए इस्तेमाल किया गया है। राजनीतिक नेताओं और दक्षिणी मध्य प्रदेश के किसानों ने पारधियों और उनकी तथाकथित निम्न 'नैतिकता' तथा आतंक का बार–बार जिक्र किया है। नतीजतन आर्थिक और राजनैतिक रूप से हाशिए पर खड़ा यह समुदाय 'निचले' समुदायों के खिलाफ उभारे जाने वाले जाति पूर्वाग्रहों के कारण अब सामाजिक रूप से भी हाशिए पर आ गया है। इस इलाके में आम तौर पर अधिसूचित समुदायों के खिलाफ और विशेष रूप से पारधियों के खिलाफ जाति पूर्वाग्रहों की इस नई व्याख्या के कई ऐतिहासिक कारण हो सकते हैं, जिसकी यह रपट तहकीकात नहीं करती है। लेकिन, यह स्पष्ट है कि जाति पूर्वाग्रह के इस नए

हथियार का इस्तेमाल इस इलाके में समकालीन नेताओं द्वारा पहचान–आधारित वोटों को जोड़ने के लिए किया गया है। यहां पारधियों और अधिसूचित जनजातियों को इस इलाके से 'बाहर वाले' के रूप में पेश किया जा रहा है, जिनकी मौजूदगी मात्र नैतिक रूप से हीन मानी जाती है और साथ ही ये स्थानीय संसाधनों का दोहन तो कर ही रहे हैं।

चौथिया गांव जिस निर्वाचन क्षेत्र में शामिल है, उसके कांग्रेस विधायक सुखदेव पानसे के उदाहरण पर गौर फरमाएं। 2007 में पारधीढाना को ढहाए जाने वाले नेताओं में से पानसे भी एक था। सालों तक, वह पारधी–विरोधी एजेण्डा का इस्तेमाल करता रहा और पारधीढाना के विध्वंस के लगभग चार साल पहले, 30 अगस्त 2003 को, पानसे ने मसोद निर्वाचन क्षेत्र के घाट अमरावती गांव में एक उत्तेजित भीड़ का नेतृत्व किया था, जिसने कि 10 घरों को जला दिया और तीन पारधियों को पत्थर मार–मारकर मौत के घाट उतार दिया। 2004 में, मसोद निर्वाचन क्षेत्र से पानसे पहली बार विधायक बना।

घाट अमरावती मामले में पुलिस जांच के बाद तीन लोगों को गिरफ्तार किया गया लेकिन इस मामले में संलिप्त पानसे का नाम शामिल ही नहीं किया गया। हालांकि, घाट अमरावती मामले में गिरफ्तार लोगों को बरी कर दिए जाने के कुछ दिन बाद ही, करीब के आमला ज़िले के खापा खेटड़ा गांव में 24 सितम्बर 2004 को अधिसूचित जनजातियों के साथ हिंसा की एक और घटना हुई, जिसमें हंगरी लोहार समुदाय की तीन महिलाओं को जलाकर मार दिया गया। इस मामले में किसी को भी गिरफ्तार नहीं किया गया है।

आदिवासियों के खिलाफ घातक हिंसा की छुटपुट घटनाएं इस इलाके में लगातार होती रही हैं: 13 जून 2006 को दो हंगरी लोहार आदमियों को मार दिया गया, 9 सितम्बर 2006 को – पारधीढाना के विनाश से ठीक एक साल पहले – दो हंगरी लोहार आदमियों और एक अज्ञात आदिवासी समुदाय की महिला को मार दिया गया। 2003 से 2007 के बीच, 4 साल की छोटी–सी अवधि में, इस इलाके में 11 आदिवासी लोगों को मार डाला गया लेकिन इन मामलों में से एक में भी किसी की गिरफ्तारी नहीं हुई। यदि हम षड़यंत्र सिद्धान्त से सतर्क रहें, तो भी इस बात को नज़रअंदाज़ करना मुश्किल है कि इस इलाके में अनुसूचित और अधिसूचित जनजातियों के खिलाफ हिंसा के मामलों में चुप्पी बनाए रखने में पुलिस, प्रशासन और राजनेताओं की सांठगांठ सामने आती है।

2007 में पारधीढाना के विध्वंस ने पानसे के राजनैतिक कैरियर को आगे बढ़ाने में सीधे तौर पर मदद की। 2003 की ही तरह, जब उसने बाहरी/पारधी–विरुद्ध मंच का उपयोग मसोद में 2004 के चुनाव जीतने में किया था, 2007 में वह 2008 में होने वाले चुनाव का इंतज़ार कर रहा था। हालांकि हाल ही में निर्वाचन क्षेत्रों के सीमा–निर्धारण ने स्थिति को थोड़ा जटिल कर दिया था। पानसे, जो कि मसोद से विधायक था, को अब एक नवगठित निर्वाचन क्षेत्र से सीट हासिल करनी थी, जिसमें कि चौथिया गांव (जहां पारधीढाना स्थित था) भी शामिल था। सीट के लिए उसके प्रतिद्वंद्वी समाजवादी पार्टी के एक मज़बूत उम्मीदवार डॉ. सुनीलम थे। सुनीलम के किसान संघर्ष में शामिल होने के इतिहास ने पानसे के विधायक बनने के अवसर को स्पष्ट रूप से एक गंभीर चुनौती पेश की।

इन परिस्थितियों में, पानसे ने फिर से पारधी–विरोधी एजेण्डा का इस्तेमाल किया, जो कि पिछले चुनाव में मसोद में उसके लिए काम कर गया था। ऐसा लगता है कि पानसे का खेल असर दिखा गया क्योंकि पारधी–विरोधी एजेण्डे का उपयोग कर अब उसने कांग्रेस (आई) के टिकट पर अगला चुनाव जीता।

पारधीढाना विध्वंस मामले का एक और आरोपी प्रमुख राजनेता राजा पवार है। उसकी पत्नी मध्य प्रदेश पुलिस में है और वह खुद एक स्थानीय व्यापारी होने के साथ–साथ जनपद अध्यक्ष भी है। 2007 में पारधीढाना में की गई अपनी कार्यवाहियों के बाद, जिसमें कि वह अलसिया पारधी के घर को अवैध रूप से गिराने का दोषी पाया गया था, वह भाजपा के ज़िला पंचायत के उपाध्यक्ष पद तक पहुंच गया, और 2013 के चुनाव के लिए इस निर्वाचन क्षेत्र से भाजपा का एक संभावित उम्मीदवार बन गया है।

लेकिन, ज़ाहिर है, इसके लिए केवल राजनेताओं को दोष देने का कोई अर्थ नहीं है क्योंकि इस इलाके के किसानों ने स्पष्ट रूप से उनके लिए वोट दिया। हालांकि यह तथ्य कि मुलताई तहसील में पारधियों की आबादी बहुत कम है और पारधीढाना में, जो कि किसानों के गुस्सा का केन्द बना, बमुश्किल से 200–300 घर पारधियों के हैं, इनके प्रति घृणा के उभार के कई कारणों की संभावना की ओर साफ–साफ इशारा करता है।

इन कारणों में से कुछेक हैं, कुन्बी और किराड़ जैसे पिछड़ी जाति के स्थानीय मध्यम वर्गीय किसानों (जो कि इस इलाके पर और यहां के संसाधनों पर अपना दावा करते हैं) का जाति उभार, ज़मीन–जायदाद बाज़ार में उछाल आने के कारण निजी सम्पत्ति की बढ़ती चेतना और पूर्व में 'निचले' माने जाने वाले समुदाय की बढ़ती हुई आर्थिक शक्ति और आत्मविश्वास के प्रति गुस्सा। यह रपट महज़ इतना ही प्रयास करती है कि पारधीढाना के रहवासियों द्वारा सामना किए जा रहे अन्याय को दर्ज करे और उनके साथ लगातार हो रहे दुर्व्यव्हार को लोगों के सामने लाए।

---

[1]मुलताई तहसील बैतूल ज़िले की कई तहसीलों में से एक है और इसकी आबादी ज़्यादातर पिछड़ी जाति के किसान हैं। मुलताई तहसील का प्रशासनिक मुख्यालय मुलताई कस्बा है जो मध्य भारत की एक महत्वपूर्ण नदी, ताप्ती का उद्गम स्थल होने के कारण हिन्दू धार्मिक महत्व का स्थान है। यहां के अधिकांशतः मराठी भाषी किसान औपनिवेशिक काल में यहां बसाए गए थे जब औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था की खातिर बड़े पैमाने पर जंगलों का सफाया करके बड़ी संख्या में लोगों को कृषि के कामों में 'स्थापित' किया जा रहा था। मुलताई तहसील का जंगल आच्छादित क्षेत्र केवल लगभग 11 प्रतिशत है (जनगणना 2001)। यह बैतूल ज़िले में ही स्थित पड़ोसी भैंसदेही तहसील से बिल्कुल विपरीत है, जहां बहुत अधिक वन क्षेत्र, ज़्यादा ऊंचे–नीचे पहाड़ और साथ ही अधिक अनुसूचित जनजातीय आबादी है। दोनों तहसीलों में पारधियों को कोई विशेष दर्जा नहीं दिया गया है।

अध्याय 2

विस्थापन और गरीबी

2007 की घटनाओं को हुए पांच साल से भी अधिक समय हो जाने के बाद, जब जांच टीम विस्थापित पारधियों से मिलने गई तो उन्होंने पाया कि प्रशासनिक और राजनैतिक उदासीनता अभी भी बरकरार है। ऐसे कई तरीकों को व्यक्त करने से पहले, जिसमें कि चौथिया गांव के पारधीढाना के विस्थापित पारधी प्रशासनिक अमले की जाति आधारित व बहुसंख्यकवाद की राजनीति के शिकार हुए, पारधीढाना के विध्वंस की घटनाओं और उसके रहवासियों के विस्थापन का एक सिलसिलेवार विवरण यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

विध्वंस, विस्थापन, बलात्कार और हत्या

9 सितम्बर 2007 को सांडिया गांव की स्थानीय कुन्बी महिला अनसुइयाबाई के बलात्कार व हत्या और उसके आरोपी के पारधी होने की खबरें आना शुरू हो गईं। स्थानीय किसानों ने आंदोलन शुरू कर दिया और अपराधी के पारधी होने के आरोपों को सही मान लिया गया। उसी दिन अपर कलेक्टर मसूद अख्तर ने प्रदर्शनकारियों को आश्वासन दिया कि तीन दिनों के भीतर यानी कि 11 सितम्बर तक पारधीढाना ध्वस्त कर दिया जाएगा। हकीकत यह है कि बस्ती में 11 घरों के पट्टे थे इसका कहीं भी ज़िक्र नहीं किया गया है और सभी रिपोर्टों से यही ज़ाहिर होता है कि इरादा पूरे पारधीढाना को ध्वस्त करने और वहां रह रहे रहवासियों को हटाने का था।

अगले दिन, 10 सितम्बर की सुबह, पुलिस ने अचानक से इतने हिंसक तरीके से पारधीढाना पर हमला किया कि लोगों को लगने लगा कि कुछ गड़बड़ है और डर के मारे वे इधर–उधर भागने लगे। आखिरकार पारधीढाना के सभी रहवासियों को पुलिस द्वारा घेर लिया गया। पुलिस का कहना था कि अनसुइयाबाई के बलात्कार व हत्या के प्रतिशोध में बहुसंख्यक किसानों द्वारा बस्ती पर हमला किया जाने वाला था। अतः पारधीढाना के रहवासियों की सुरक्षा के लिए वह वहां आई थी। बहुत बूढ़ों और बहुत छोटे बच्चों को छोड़कर सभी पारधीढाना रहवासियों को इस बहाने से मुलताई पुलिस थाना ले जाया गया कि अनसुइयाबाई का बेटा कथित बलात्कारियों और हत्यारों की पहचान करने के लिए वहां पर मौजूद था। बेटे द्वारा पारधीढाना के किसी भी रहवासी की पहचान बलात्कारी–हत्यारे के रूप में नहीं करने के बावजूद सभी को वहीं रोके रखा

गया। डोडेलबाई, बोन्द्रु, लंगड़, रामप्यारी और सौदागीर समेत लगभग आठ से दस लोगों ने, जो कि जंगल में थे, देखा कि पुलिस ने पारधीढाना के सभी रहवासियों को दूर से घेर रखा है। परन्तु डर के मारे वे जंगल में ही छिपे रहे।

पारधीढाना के रहवासियों को शाम तक मुलताई पुलिस थाना में ही रखा गया और शाम के साढ़े पांच के लगभग वापस पारधीढाना ले जाया गया। वहां उन सबको बेदखली की नोटिस थमा दी गईं जिनमें लिखा था कि अगली सुबह तक, यानी कि मुश्किल से 12 घंटे बाद उनके घरों को गिरा दिया जाएगा। विस्थापित लोगों में से कुछ ने बताया कि उन्हें नोटिस पकड़ाते समय ही उनके नाम उन पर लिखे जा रहे थे। लेकिन उसके ठीक बाद उन्हें अपने सामानों को इकट्ठा करने के लिए पर्याप्त समय दिए बिना ही विस्थापित होने वाले लोगों को पुलिस वैन में भरकर मुलताई रेलवे स्टेशन भेज दिया गया। वहां से उन्हें तुरन्त ही ट्रेन द्वारा भोपाल भेज दिया गया, जहां उन्होंने स्टेशन में ही रात बिताई। ये अजीब है कि इसके पहले कि वे कुछ समझ पाते उनमें से 10 महिलाओं को बिना किसी कारण के रोक लिया गया। चूंकि पारधीढाना के कुछ रहवासियों की पुलिसवालों से दोस्ती थी इसलिए जब उनसे कहा गया कि महिलाओं को बाद में जीप से भेज दिया जाएगा तो उन्हें किसी भी प्रकार का कोई शक नहीं हुआ। अगली सुबह, 11 सितम्बर को, जब महिलाएं भोपाल पहुंची तब उन्होंने अपने रिश्तेदारों को बताया कि पिछली शाम राजनैतिक नेताओं और ग्राम पंचायत के लोगों द्वारा उनके साथ सामूहिक बलात्कार किया गया (देखें अध्याय 'औरतों का शरीर जंग का मैदान')।

इसी बीच, सुबह लगभग साढ़े सात से आठ के बीच पारधीढाना में विध्वंस शुरू हो गया। मकानों और झोंपड़ियों के गिराने व आगजनी में भाजपा और कांग्रेस (आई) दोनों के राजनेताओं ने अगुवाई की। पड़ोसी गांवों से ट्रेक्टरों में लदकर बड़ी संख्या में आदमी आए और भीड़ की संख्या सैकड़ों में हो गई। बाद में मुलताई शहर से वहां एक जेसीबी मशीन लाई गई। इस मशीन का इस्तेमाल भाजपा से जुड़े जनपद सदस्य, राजा पवार द्वारा पारधीढाना के पक्के मकानों को गिराने के लिए किया गया। दोपहर दो बजे के लगभग कई वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी जैसे कि तत्कालीन कलेक्टर अरुण भट्ट और बैतूल ज़िले के तत्कालीन पुलिस अधीक्षक जगत सिंह संस्वाल विध्वंस के मौके पर उपस्थित थे। ये स्पष्ट है कि वे विध्वंस को रोकने के लिए कुछ नहीं कर रहे थे। बाद में पुलिस का कहना था कि भीड़ इतनी ज़्यादा बड़ी थी कि उसके लिए उनका नियंत्रण करना संभव नहीं था।

पारधियों के जिस समूह ने जंगल में रात बिताई थी वो अभी भी छिप रहे थे और धीरे–धीरे खेतों के रास्ते गांव वापस लौट रहे थे। उनमें से दो, बोन्द्रु और डोडेलबाई (पति–पत्नी) ने छुपने से मना कर दिया और अपने बकरियों के झुंड के साथ सड़क पर चलने लगे। परन्तु, जल्दी ही, पारधीढाना के विध्वंस के लिए ज़िम्मेदार पुरुषों से भरे गुजर रहे एक ट्रेक्टर ने दम्पत्ति को रोका और उस पर हमला कर दिया। बोन्द्रु को निर्दयता से पीटा गया और डोडेलबाई के साथ कथित तौर पर सामूहिक बलात्कार किया गया। उसके बाद दोनों की हत्या कर दी गई, हालांकि यह अभी भी स्पष्ट नहीं है कि जब डोडेलबाई को पास के कुएं में फेंका गया उस समय वह

ज़िंदा थी या नहीं। खेतों में छिपे हुए अन्य पारधियों ने यह सब देखा। उन्होंने कई बार विभिन्न अधिकारियों को घटना के बारे में अपना बयान दिया और आरोपियों के नाम भी बताए (देखें अध्याय 'सी.बी.आई. के आरोप पत्रों का विश्लेषण' तथा 'निष्कर्ष')।

पारधीढाना के विध्वंस का काम पूरा हो जाने पर कई स्थानीय राजनेताओं ने इसका श्रेय लेना शुरू कर दिया। विध्वंस के पांच दिन बाद, 16 सितम्बर को मुलताई में 'बहुसंख्यक' समाज द्वारा एक जनसभा बुलाई गई जिसमें कई राजनेता और शासन के लोग शामिल हुए थे। इसमें भाजपा और कांग्रेस के नेताओं सहित भाजपा से जुड़े राज्य के तत्कालीन राजस्व और 'संरक्षक' मंत्री कमल पटेल, तत्कालीन कलेक्टर और तत्कालीन पुलिस अधीक्षक भी शामिल थे। इस बैठक में पटेल ने पारधीढाना में भीड़ द्वारा की गई कार्यवाही को न्यायोचित ठहराया और 'बाहरी लोगों' यानी कि कुछ सौ पारधियों को मुलताई से बाहर रखने की आवश्यकता को दोहराया।

जब राजनेता और स्थानीय प्रशासक मुलताई में अपनी कार्यवाही को जायज़ ठहरा रहे थे, तब भोपाल में कुछ राज्य स्तरीय प्रशासकों ने विस्थापित पारधियों के पुनर्वास की व्यवस्था करना शुरू कर दी थी। विध्वंस के एक दिन बाद, 12 सितम्बर को सभी विस्थापित गांववासियों को पुलिस कमिश्नर की मदद से भोपाल के शास्त्री नगर के सामुदायिक केन्द्र में रख दिया गया। वहां हर व्यक्ति को हर खाने में बमुश्किल दो रोटी मिलती थी और वे लगातार पुलिस की निगरानी में थे। उन्हें लगभग एक महीने तक सामुदायिक केन्द्र छोड़ने की अनुमति नहीं थी। हालांकि, विस्थापित पारदियों के आपसी मतभेद जल्द ही सामने आ गए थे। भोपाल में रहते हुए कुछ हफ्ते बीत जाने के बाद, 28 सितम्बर को पारधीढाना के 100 के लगभग विस्थापित लोग मुआवज़ा मिलने के बारे में सुनकर भोपाल से बैतूल रवाना हो गए। रत्नाबाई के नेतृत्व में यह उन परिवारों का समूह था जिनके पास ज़मीन के पट्टे थे और जिन्हें पारधीढाना में पक्के मकान बनाने के लिए इंदिरा आवास योजना के तहत अनुदान प्राप्त हुआ था।

हालांकि, अल्पसंख्यक–विरोधी भावना के मुताबिक बैतूल के भाजपा विधायक शिवप्रसाद राठौर के नेतृत्व में मुलताई नगरवासियों ने विस्थापित पारधियों के मुलताई पॉलिटेक्निक कॉलेज में रखे जाने की संभावना का विरोध किया। उन्होंने राजमार्ग को बंद कर दिया और धरने पर बैठ गए। वहां पर राठौर, जो कि मुलताई पॉलिटेक्निक छात्र–अभिभावक संघ का अध्यक्ष भी था ने प्रेस को संबोधित करते हुए कहाः उन्हें (विस्थापित पारधियों को) महाराष्ट्र वापस जाना चाहिए जहां से वर्षों पहले वे यहां आए थे और अवैध रूप से बस गए थे (*द संडे एक्सप्रेस,* 30 सितम्बर 2007)।

रत्नाबाई के नेतृत्व वाले समूह को कोई मुआवज़ा नहीं दिया गया और उन्हें मुलताई से थोड़े पहले बैतूल में रोक लिया गया। उन्हें बैतूल शहर के बीचोंबीच शहीद भवन नामक खेल परिसर में रहने की अनुमति दी गई। वे यहां 2010 तक रहे, जब उन्हें एक बार फिर बाहर निकाल दिया गया। 'रत्ना समूह' के नाम से पहचाने जाने वाले इस समूह ने पुनः पट्टा मिल जाने की उम्मीद के कारण विस्थापन की कानूनी लड़ाई से दूरी बनाकर रखी है। हालांकि, इस फैसले से उनके रहने की स्थिति में बहुत

कम प्रभाव पड़ा क्योंकि वे पारधीढाना के अन्य विस्थापित रहवासियों से बमुश्किल 100 मीटर की दूरी पर उसी गरीबी में रहते हैं।

पट्टाविहीन दूसरा समूह अपने नेता अल्सिया पारधी के अनुरूप 'अल्सिया समूह' के रूप में जाना जाता है। यह समूह बैतूल की झुग्गियों में रहता है लेकिन इस समूह ने एक अलग रास्ता चुना है। पारधीढाना के विध्वंस के लगभग एक महीने बाद, 6 अक्टूबर को उन्हें बिना किसी चेतावनी के बैतूल ज़िले की शाहपुर तहसील ले जाया गया। वहां उन्हें देर रात राजमार्ग पर एक मैदान में छोड़ दिया गया, जहां उन्हें एहसास हुआ कि वे बरेठा वन विभाग के कॉटेज में थे। वे यहां लगभग तीन साल तक रहे। राजमार्ग पर होने की वजह से वे पड़ोसी गांववालों से बहुत कम बात कर पाते थे और ड्यूटी पर तैनात पुलिसवालों द्वारा उन पर लगातार नज़र रखी जाती थी। यद्यपि उन्हें राशन मिलता था, 21 अक्टूबर 2010 को अचानक से राशन बंद कर दिया गया। अगले दिन विस्थापित लोग बैतूल पहुंचे और पुराने बस स्टैण्ड के पास की ज़मीन पर झोंपड़ी बनाकर रहने लगे। आज तक वे वहीं बसे हुए हैं। अब इसे पारधी शिविर, एक्सीलेंस स्कूल परिसर कहा जाता है।

दोनों शिविरों में लोग खस्ताहाल झोंपड़ियों में रहते हैं और दोनों शिविरों में सर्दी के दौरान बुजुर्ग लोगों और नवजात शिशुओं के मौत की घटनाएं हुई हैं। प्रशासन टैंकर से पानी उपलब्ध कराता है लेकिन शौचालय की कोई सुविधा नहीं है। अब लड़कियों को स्कूल बिलकुल भी नहीं भेजा जाता है। केवल कुछ लड़के ही

स्कूल जाते हैं लेकिन वे बताते हैं कि यदि वे फीस नहीं दें तो टीचर उन्हें स्कूल में बैठने की अनुमति नहीं देते।

विस्थापित पारधीढाना रहवासियों के निरंतर बेघर रहने का एक प्रमुख कारक स्थानीय राजनैतिक प्रतिष्ठान द्वारा उनकी वापसी के लिए किए जाने वाले प्रशासनिक प्रयासों का विरोध किया जाना है। मध्य प्रदेश राज्य मानवाधिकार आयोग (एमपीएचआरसी) के निर्देश के बावजूद उन्हें बसाने के लिए कोई प्रयास नहीं किए गए हैं। अब उनके बंदोबस्त के आदेश के क्रियान्वयन के लिए एमपीएचआरसी ने जबलपुर उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की है। नवम्बर 2012 में जांच टीम के तत्कालीन कलेक्टर से मुलाकात करने के बाद, एक सकारात्मक पहल लेते हुए विस्थापित लोगों के लिए मुख्यमंत्री आवास योजना के तहत पट्टे और ऋण मंजूर किए गए हैं। लेकिन सभी प्रमुख राजनैतिक दलों द्वारा उनके पुनर्वास का विरोध किए जाने के कारण विस्थापित पारधीढाना रहवासी निरंतर बैतूल शहर की झुग्गियों में रह रहे हैं।

विस्थापित पारधीढाना रहवासियों की सतत दरिद्रता के बावजूद, मुख्यधारा के एक भी राजनीतिज्ञ ने इस मुद्दे को नहीं उठाया है और न ही बैतूल या मुलताई के मौजूदा विधायकों में से किसी ने भी मध्य प्रदेश विधान सभा में इस मुद्दे को उठाया है। भले ही सभी प्रमुख राष्ट्रीय दलों की रुचि इस मुद्दे के जरिए बहुमत वोट बैंक को दोहने में रही है लेकिन राज्य स्तरीय राजनैतिक दल, समाजवादी जन परिषद से संबद्ध श्रमिक आदिवासी संगठन न्याय और पुनर्वास हासिल करने के लिए अल्सिया समूह के साथ काम कर रहा है। इस समूह के प्रयासों के कारण ही पारधीढाना विस्थापन मुद्दा अदालत तक पहुंच पाया है और इस पर सी.बी.आई. जांच भी बिठाई गई है। इससे एक बहुत तकलीफदेह सवाल उठता है कि क्या ऐसे वोट बैंक की राजनीति इतनी आसानी से बहुसंख्यक आधारित ही बनी रहेगी?

अधिसूचित, घुमन्तु और अर्द्ध–घुमन्तु जनजाति राष्ट्रीय आयोग

अधिसूचित, घुमन्तु और अर्द्ध–घुमन्तु जनजाति राष्ट्रीय आयोग की रपट, जिसमें कि बालकृष्णा रेंके, लक्ष्मीबाई पाटनी और मीना राधाकृष्णा की मुख्य भूमिका थी, का उल्लेख किए बिना विस्थापित पारधियों के बारे में कोई भी चर्चा पूरी नहीं होती है। न्याय पाने हेतु विस्थापित पारधियों के संघर्ष को जारी रखने के लिए इस आयोग (जिसे कि रेंके आयोग भी कहते हैं) की रपट के साथ ही 2009 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए प्रगतिशील दृष्टिकोण की भूमिका आवश्यक रही है।

रेंके आयोग के सदस्यों को विस्थापित पारधियों के खिलाफ अपराध की गंभीरता को पहचानने में देर नहीं लगी और 29 एवं 30 सितम्बर 2007 के बीच इन लोगों ने इसकी जांच की। वास्तव में, बालकृष्णा रेंके के हस्तक्षेप के चलते ही रत्ना समूह को बैतूल में रहने के लिए जगह दी गई थी।

19 अक्टूबर 2007 को आयोग ने अपनी रपट जारी की थी। आयोग ने एक सराहनीय कदम उठाते हुए इस इलाके में बहुसंख्यक वोट बैंक की राजनीति के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाले प्रशासन और पुलिस को दोषी ठहराया था। इस रपट में विस्थापित पारधियों के अधिकारों के लिए पूरे जोश के साथ दलीलें

पेश की गई थीं और लोगों को विस्थापित करने, सम्पत्ति को नष्ट करने, महिलाओं का बलात्कार करने व हत्या के अपराध में कथित तौर से संलिप्त प्रशासन एवं निर्वाचित सरकार के लोगों के नाम, उनके व्यवसाय और उनके राजनैतिक ताल्लुक को सूचीबद्ध किया गया था। बैतूल के स्थानीय पत्रकारों के एक समूह द्वारा पीड़ित लोगों की मौखिक गवाहियों और 9 सितम्बर 2007 की वीडियो रिकॉर्डिंग को उनके सामने पेश करने की वजह से आयोग यह कर पाया।

इसके अलावा, आयोग की रपट में डोडेलबाई के बलात्कार व हत्या, बोन्द्रु की हत्या और पारधीढाना में महिलाओं के बलात्कार का भी उल्लेख किया गया है। इस रपट के साथ, राज्य फोंरेंसिक संस्थान के निर्देशक की फोरेंसिक रपट ने डोडेलबाई के बलात्कार व हत्या और बोन्द्रु की हत्या के मामले में प्राथमिक सूचना रपट के पंजीकरण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। बोन्द्रु और डोडेलबाई की मौत को एक स्थानीय चिकित्सक द्वारा 'स्वाभाविक' करार दिया गया था लेकिन फोरेंसिक रपट में इसका खंडन किया गया और बोन्द्रु के मृत शरीर पर गंभीर चोटों की ओर इंगित किया। हालांकि डोडेलबाई के शव की हालत के कारण उसके बलात्कार की जांच नहीं की जा सकी, रपट ने निष्कर्ष निकाला है कि दोनों की मौत का समय एक ही था।

आयोग की रपट में पारधीढाना के विध्वंस को भड़काने के लिए कई निर्वाचित प्रतिनिधियों और पुलिस एवं प्रशासनिक कर्मियों को नामज़द किया गया है और 10 सितम्बर की शाम को अल्सिया पारधी के घर में 10 महिलाओं के साथ किए गए सामूहिक बलात्कार के आरोपों एवं बोन्द्रु की हत्या व डोडेलबाई के बलात्कार व हत्या के आरोपों को भी दर्ज किया गया है। रपट में बहुत साफ शब्दों में बैतूल प्रशासन द्वारा विस्थापित लोगों के लिए की गई पुनर्वास पैकेज की व्यवस्था को खारिज करते हुए उसे जातिवादी, असंवैधानिक और औपनिवेशिक समय के आपराधिक जनजाति आयोग द्वारा किए गए बंदोबस्तों के समकक्ष बताया (रेंके आयोग रपट के सार के लिए परिशिष्ट 2 देखें)।

इस रपट के जारी होने के बाद, बलात्कार का आरोप लगाने वाली महिलाओं का मेडिकल परीक्षण किया गया – घटना को हुए एक महीने से अधिक समय बीत जाने के बाद। हालांकि, सी.बी.आई. द्वारा दर्ज किए गए दो आरोप पत्रों में कहीं भी मेडिकल रिपोर्टों या बलात्कार का कोई ज़िक्र नहीं है। दूसरे शब्दों में, कोई भी महिलाओं की मेडिकल जांच के परिणामों के बारे में नहीं जानता है। अंततः, आयोग की रपट ने विस्थापित पारधियों के पुनर्वास के लिए कई सिफारिशें की हैं लेकिन सरकार ने उन्हें लागू करने का कोई इरादा नहीं दिखाया है।

प्रशासन का भेदभावपूर्ण रवैया

बैतूल ज़िले में पारधियों का विशेष रूप से हाशिए पर होना, मामले को और बदतर बना देता है (अधिक जानकारी के लिए परिशिष्ट 5 'पारधियों के वर्गीकरण की गड़बड़ी' देखें)। यद्यपि बैतूल ज़िले में वे अनुसूचित जनजातियों में आते हैं, लेकिन बैतूल ज़िले के उप–संभाग मुलताई में, जहां चौथिया स्थित है, न तो वे अनुसूचित जनजातियों में आते हैं और न ही अनुसूचित जातियों में। बचाव के इस रास्ते का इस मामले में बखूबी इस्तेमाल हुआ है। चूंकि

औपचारिक कागज़ों में पारधी मुलताई में किसी भी वर्ग में नहीं आते, इसलिए उनके हाशियेकरण के बावजूद, इस मामले में अनुसूचित जाति और जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम लागू नहीं किया गया है।

दूसरी ओर, राष्ट्रीय स्तर पर पारधी 'अधिसूचित' हैं; हालांकि, इस ज़िले में, उनके साथ 'घुमन्तु' और 'अपराधी' होने का टैग लगा हुआ है और इसलिए किसी भी लाभ के लिए प्रशासन द्वारा उन्हें योग्य नहीं समझा जाता है। हमसे बात करने वाले प्रशासनिक अधिकारियों के मुताबिक, केन्द्र सरकार के सामाजिक न्याय मंत्रालय ने भी विस्थापित पारधियों के पुनर्वास के लिए किसी भी प्रकार की वित्तीय सहायता देने से इंकार कर दिया।

सी.बी.आई. के आरोप पत्र और प्रशासनिक नज़रिया, दोनों में, पारधीढाना के विध्वंस के लिए परिस्थितियों को तैयार करने में पारधियों का ही दोष नज़र आता है। यह माना जाता है कि ये पारधी ही हैं जो बहुसंख्यक समुदाय को 'आतंकित' करते हैं और इसलिए उनका विस्थापन बहुसंख्यक द्वारा की गई एक उचित प्रतिक्रिया है।

हमारा दावा है कि पारधियों के प्रति सी.बी.आई, प्रशासन और पुलिस का रवैया इस इलाके में इस बहुसंख्यकवादी पारधी–विरोधी नज़रिए से उपजता प्रतीत होता है। उदाहरण के लिए, सी.बी.आई. के आरोप पत्र, में पारधीढाना विध्वंस मामले में सूचीबद्ध किए गए 82 अपराधियों को उन्हीं की जांच रपट दोषमुक्त करार देती है। सबसे पहले, यह दावा कर कि पट्टाधारी पारधी परिवार केवल 1995–96 में ही महाराष्ट्र से चौथिया गांव आए थे, यह लोकलुभावन विचार मान लिया जाता है कि पारधी 'बाहरी' हैं, उनका ज़मीन पर कोई वास्तविक मालिकाना हक नहीं है। जांच टीम को पारधियों द्वारा दी गई मौखिक गवाही और साथ ही सी.बी.आई. को दिए गए उनके बयान में यह दर्ज है कि पारधी परिवार कम से कम तीन पीढ़ियों से चौथिया में रह रहे थे। चौथिया ग्राम पंचायत में पारधीढाना एक वार्ड है, इस तथ्य को और कैसे समझाया जा सकता है?

दूसरा, इस रवैये का अनुसरण करते हुए सी.बी.आई. रपट मानती है कि 'पारधियों के खिलाफ आक्रोश' तब उभरा जब अनसुइयाबाई का बलात्कार व हत्या कर दी गई थी (देखें अध्याय 'सी.बी.आई. के आरोप पत्रों का विश्लेषण')। यह धारणा एक मौलिक त्रुटि पर आधारित है। आपराधिक कानून समुदायों के खिलाफ नहीं, केवल व्यक्तियों के खिलाफ इस्तेमाल किया जा सकता है। इस मामले में, सी.बी.आई. और कई गवाह यह कहकर कि कैसे 'कुछ' पारधियों ने अनसुइयाबाई का बलात्कार व हत्या की थी, ऐसी धारणा बना रहे हैं कि पूरा समुदाय उसकी हत्या के लिए ज़िम्मेदार था। वे पुनः ज़ोर देते हैं कि पारधियों की इस हरकत के कारण ही स्थानीय पिछड़ा वर्ग किसान गुस्से में आया था। प्रशासन द्वारा पारधियों के बारे में इन मान्यताओं को साझा करने से जांच टीम को स्थिति को समझने में मदद मिली।

प्रशासन की बेपरवाही

विस्थापित पारधियों की स्थिति का आकलन तब तक अधूरा ही रहेगा जब तक कि उनकी दरिद्रता को बढ़ाने में प्रशासन की भूमिका पर विचार नहीं किया जाता है।

9 सितम्बर 2007 को, अनसुइयाबाई के कथित

बलात्कार व हत्या वाले दिन, अपर कलेक्टर मसूद अख्तर ने प्रदर्शनकारियों को आश्वस्त करना उपयुक्त महसूस किया कि अपराध में 'कुछ' पारधियों की भागीदारी को देखते हुए चौथिया के पारधीढाना को तीन दिन के अंदर धराशायी कर दिया जाएगा। बहरहाल, यह तो मुलताई ज़िले के पारधियों के लिए तत्कालीन कलेक्टर अरुण भट्ट का 'पुनर्वास पैकेज' था जो कि सुस्पष्ट रूप से प्रशासन के जाति पूर्वाग्रह को सामने लाता है। जांच टीम ने राज्य प्रशासन से इस प्रस्ताव की एक कॉपी पाने की नाकाम की कोशिश की। यद्यपि, रेंके आयोग की रपट ने इस रपट की समस्याओं को दर्ज किया ('अधिसूचित, घुमन्तु और अर्द्ध–घुमन्तु जनजाति राष्ट्रीय आयोग की रपट' के सार के लिए देखें परिशिष्ट 2)। भट्ट के पुनर्वास पैकेज ने न केवल पारधियों को स्थानीय मध्यम वर्गीय किसानों से अलग करने का प्रस्ताव दिया था बल्कि यहां तक सुझाव दे डाला था कि ऐसा करने पर मुलताई की 'पारधी समस्या' का हल हो जाएगा। भट्ट के प्रस्ताव ने मान लिया था कि पारधी, व्यक्तिगत और सामुदायिक रूप से, स्वभावतः ही अपराधी होते हैं और उन्हें 'सुधार' की ज़रूरत है। यह सब इस तथ्य के बावजूद है कि (क) पारधियों को राष्ट्रीय स्तर पर सीमांत और अधिसूचित के रूप में पहचाना जाता है और (ख) मुलताई में वे न तो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग में आते हैं!

मौजूदा कलेक्टर ने स्पष्ट रूप से भट्ट के पुनर्वास पैकेज को खारिज कर दिया और विस्थापित पारधियों को 'मुख्यधारा' में लाने की आवश्यकता के बारे में जांच टीम से बात की। हालांकि, इन सभी प्रशासनिक कवायदों में, पारधियों से कोई नहीं पूछता कि वे अपने विकास या मुख्यधारा में शामिल होने के बारे में क्या सोचते हैं।

नतीजतन, प्रशासनिक अधिकारी यह बताते हैं कि कैसे विस्थापित लोगों ने पुनर्वास के लिए दिखाई गई सभी ज़मीन को खारिज कर दिया था। हालांकि, तथ्य यह है कि विस्थापितों को बेहद कम गुणवत्ता वाली ज़मीन दिखाई गई थी। समूह के भीतर विभाजन होने के बावजूद, दोनों समूहों ने बताया कि कैसे उन्हें दिखाए गए ज़मीन के तीनों टुकड़े रहने लायक नहीं थे। विस्थापित लोगों के अनुसार, गाओथाना की ज़मीन कहीं से भी सड़क से जुड़ी नहीं थी। चक्का रोड में, मारामजिरी में पानी की कोई सुविधा नहीं होने और सड़क तक कोई पहुंच न होने के साथ ही ज़मीन रेलवे पटरियों के ऊपर की तरफ ढलानदार थी। टेमनी में उन्होंने सबसे खराब ज़मीन दिखाई, जो कि एक जलधारा के निकट थी। ज़मीन में नमी थी और एक जानकार के अनुसार, धारा के दूसरी ओर गोंड कब्रिस्तान की ज़मीन थी।

जांच टीम से बात करते समय प्रशासकों के व्यक्तिगत पूर्वाग्रह भी देखने को मिले। बैतूल शहर के केन्द्र से पारधियों को दूर करने की आवश्यकता पर बल देते हुए, एक प्रशासक ने कहा कि कैसे विस्थापित लोग खुद अब बैतूल में ही रहना चाहते हैं क्योंकि गांव में आवश्यक कठिन परिश्रम करने की तुलना में यहां भीख मांगना आसान था। यह बताने के लिए कि, पारधियों को 'विकसित' करने में प्रशासन को कितना सारा काम करने की ज़रूरत है, अक्सर उनके साफ–सफाई से न रहने के बारे में टिप्पणियां की जाती हैं। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण)

अधिनियम के कैसे दुरुपयोग होने की संभावना रहती है, ऐसी टिप्पणियां मामले को और बदतर बना देती हैं।

अंत में, पारधी समुदाय की आदतों से सम्बन्धित विचार भी कभी भी चर्चा से बाहर नहीं थे। जांच टीम को बताया गया कि कैसे रोज़गार दिए जाने के बावजूद लोग उन पर टिक नहीं पा रहे थे। वास्तव में, शिविर में रह रहे लोगों ने टीम को बताया कि उन्हें एक टायर फैक्ट्री में रोज़गार दिया गया था, जहां उन्हें हर रोज़ 80 रुपए मज़दूरी मिलती थी। ये सवाल तो है ही कि प्रशासन को ये कैसे स्वीकार था कि लोगों को नौकरी के नाम पर न्यूनतम मज़दूरी से कम मज़दूरी पर काम दिलाया जा सकता है। तिस पर काम कड़ी मेहनत का था और बस से सफर करने की आवश्यकता पड़ती थी, जिसमें एक तरफ का लगभग 20 रुपया किराया लग जाता था। इसके अलावा, श्रमिकों को कोई खाना नहीं दिया जाता था, इस कारण से खाना खरीदने में भी पैसा खर्च करना पड़ता था। संक्षेप में, नौकरी करने से उन्हें कोई लाभ नहीं हो रहा था और वर्तमान में, दोनों शिविरों में से केवल एक महिला अभी भी वहां काम करती है। दुर्भाग्यवश, वह एकल महिला है और उन बच्चों में से एक की मां है जो कि चैरिटेबल हॉस्टल से गायब हो गया है।

पुलिस और 'आपराधिक' कलंक

अंततः, पुलिस का रवैया स्पष्ट रूप से पक्षपाती बना हुआ है। नवम्बर 2012 के अंत में, जब जांच टीम ने बैतूल शहर का विज़िट किया था, हमसे बात करने वाले सिपाहियों ने पारधियों का आदतन अपराधी और निरंतर संदेह का पात्र होने के रूप में उल्लेख किया था। हमने बैतूल में पारधियों के खिलाफ कोई मामला दर्ज नहीं पाया। बल्कि एक 14 वर्षीय पारधी लड़की, राजनंदनी, और दो जवान पारधी बच्चों के बैतूल से गायब हो जाने के बारे में पूछे जाने पर पुलिस ने यह बताया कि सभी तीन गायब नहीं हुए थे परन्तु अपनी मर्ज़ी से भाग गए थे। हालांकि, इसके विपरीत हमें पता चला कि राजनंदनी का सार्वजनिक रूप से वन विभाग के अधिकारियों द्वारा अपहरण किया गया था, जबकि दोनों छोटे बच्चे, भले ही उन्होंने वह छात्रावास खुद छोड़ दिया हो जिसमें वे रहते थे, नाबालिग थे और निश्चित रूप से उनका पता लगाने के लिए एक पुलिस जांच की ज़रूरत थी। जब उनसे पूछा गया कि राजनंदनी के मामले में वन विभाग के गार्डों के खिलाफ अपहरण का कोई मामला क्यों नहीं बनाया गया, जबकि इस मामले के कई चश्मदीद गवाह थे, तब टीम इस तरह का जवाब सुनकर हतप्रभ रह गई, ''आपको लगता है कि हमें इन अपराधियों की बातों पर ईमानदार जन सेवकों के खिलाफ मामले दर्ज करना चाहिए?'' और ''इन समुदायों की महिलाएं ऐसी ही हैं, वे भाग जाती हैं।''

पुलिस के इस तरह के रवैये की रोशनी में, चैरिटेबल शैक्षिक छात्रावास, जहां से बच्चे गायब हुए थे, की महिला मालिक द्वारा लापता छह वर्षीय लड़की के यौन चरित्र पर सिर्फ इसलिए सवाल उठाना क्योंकि वह पारधी थी, कोई आश्चर्य की बात नहीं है। जांच टीम को यह स्पष्ट हो गया था कि इस इलाके से पारधियों को बाहर निकाल दिए जाने की लोकलुभावन आवश्यकता महज असमानता की एक समकालीन अभिव्यक्ति है और आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक रूप से 'निम्न' माने जाने वालों के प्रति घृणा है।

अध्याय 3

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सी.बी.आई.) के आरोप पत्रों का विश्लेषण[2]

पारधीढाना से विस्थापित हुए लोगों को पांच साल से भी ज़्यादा समय बीत जाने के बाद भी न्याय नहीं मिल पाया है (कानूनी प्रक्रियाओं की सूची के लिए परिशिष्ट 1 देखें)। विस्थापित लोग गरीबी में धंसते चले गये लेकिन पूरे ढाने को असंवैधानिक रूप से ध्वस्त करने वाले दोषियों को अभी तक सजा नहीं हुई। इस जघन्य खेल में पुलिस और सी.बी.आई. दोनों पूरी तरह से लिप्त हैं।

पुलिस की निष्क्रियता

29 मार्च 2012 को सी.बी.आई. द्वारा दाखिल किए गए आरोप पत्र के अनुसार, पारधीढाना में विध्वंस के बाद मुलताई पुलिस स्टेशन के थाना इंचार्ज मौजीलाल वर्मा ने आर्थिक हानि और विध्वंस का पंचनामा किया। वर्मा ने गवाह के रूप में अपने वक्तव्य में कहा कि उसने आर्थिक क्षति के रूप में एक लाख पचास हज़ार का पंचनामा किया और साथ ही मुलताई के पुलिस थाने में एक एफ.आई.आर. 495/07 भी दर्ज की। भारतीय दंड संहिता की धारा 147, 148, 149, 186, 427 और 436 के तहत 2000 अज्ञात लोगों के खिलाफ[3] एफ.आई.आर. दर्ज की गयी।

राष्ट्रीय स्तर पर पारधियों के घोषित रूप से अधिसूचित जनजाति होने के बावजूद पुलिस ने अनुसूचित जाति और जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 का इस्तेमाल नहीं किया। इसका स्पष्टीकरण भले ही यह है कि मुलताई में पारधियों का कोई विशेष प्रशासनिक दर्जा नहीं है, लेकिन उनका राष्ट्रीय दर्जा इस अधिनियम को लागू करने का कारण होना चाहिए था। ऐसा इसलिए होना और भी ज़रूरी था क्योंकि उनके अधिसूचित दर्जे से जुड़ी धारणाओं के कारण ही उन्हें पारधीढाना से बाहर निकाल दिया गया। इसके अलावा एक भी व्यक्ति को इस एफ.आई.आर. में नामित नहीं किया गया था जबकि सी.बी.आई. को दिए अपने गवाही बयान में वर्मा ने सुखदेव पानसे के देखे जाने और उस क्षेत्र के तत्कालीन विधायक डॉ. सुनीलम द्वारा भड़काऊ भाषण दिए जाने की बात कही थी।

अपनी कागज़ी कार्यवाही पूरी करने के बाद, वर्मा और उसके सहकर्मी इस मामले में निष्क्रिय बैठे रहे। भोपाल में कुछ विस्थापित महिलाओं द्वारा की गई बलात्कार की शिकायत को भी अनदेखा कर दिया गया। दो दिन बाद जब बोन्द्रु और डोडेलबाई की लाशें मिलीं तब पुलिस ने केवल पंचनामा ही बनाया और इसके बाद

एक पोस्टमॉर्टम रपट लगा दी जिसमें यह दावा किया गया था कि बोन्द्रु शराब की वजह से मरा है। बहरहाल बोन्द्रु और डोडेलबाई के बच्चों समेत अन्य चश्मदीद गवाहों की दृढ़ता, डोडेलबाई – जिसकी लाश कुएं में तैरती हुई मिली थी – की हत्या की निश्चितता और रेंके आयोग की रपट के कारण ही मामलों को पड़ोसी क्षेत्र के एसडीओपी को स्थानांतरित कर दिया गया जिसने एफ.आई.आर. दर्ज कर ली। मुलताई पुलिस ने मामले को दबाने का भरपूर प्रयास करते हुए डोडेलबाई की लाश मिलने के बाद उसे रिश्तेदारों को देने की बजाय दो दिन के अंदर–अंदर दफना दिया। बाद में डोडेलबाई के शव को कब्र से निकालकर और बोन्द्रु के सुरक्षित शव का भोपाल में पोस्टमॉर्टम और जाँच की गई, जिसमें यह पाया गया कि दोनों की मृत्यु निश्चित रूप से अस्वाभावकि है। जैसे कि पिछले अध्याय में बताया गया है कि, रेंके आयोग की रपट आने के बाद ही पुलिस और प्रशासन बलात्कार का आरोप लगाने वाली महिलाओं की मेडिकल जांच कराने को तैयार हुई।

लगभग दो वर्ष बाद, 9 अगस्त 2009 को श्रमिक आदिवासी संगठन के अनुराग मोदी और विस्थापित संगीता पारधी की इस मामले में पुलिस की शिथिलता के बारे में सवाल उठाने वाली जनहित याचिका पर प्रतिक्रिया करते हुए मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने पारधियों के खिलाफ अपराध की गंभीरता को स्वीकार किया और सी.बी.आई. को विध्वंस और बोन्द्रु तथा डोडेलबाई की अस्वाभाविक मृत्यु की जांच करने का निर्देश दिया। प्रतिक्रिया में सी.बी.आई. ने आरोप पत्र दाखिल तो किया पर उससे पहले ही उस पर घूसखोरी, गवाहों के बयानों को गुम करने तथा मुख्य पारधी गवाहों को धमकी देने के आरोप उठने लगे। भ्रष्टाचार और आरोपी से निकटता के कारण प्रथम जांच अधिकारी का इस मामले से स्थानांतरण कर दिया गया। इसके बाद दूसरे जांच अधिकारी, जो कि आरोप पत्र को बनाने के काफी करीब पहुंच गया था और जिसने यह बात उजागर की थी कि कई गवाहों के बयान गुम हो गए हैं, को इस मामले से एक मामूली तकनीकी कारण बताते हुए हटा दिया गया। अल्सिया पारधी ने आरोप पत्र दाखिल करने वाले जांच अधिकारी एन.के. शर्मा पर भी धमकी देने का आरोप लगाया गया था। जब अल्सिया और उसके अन्य विस्थापित साथी नरम नहीं पड़े तो शर्मा ने आरोप पत्र दाखिल तो कर दिया पर उसमें रिकॉर्ड तथ्यों और चश्मदीद गवाहों के बयानों को अनदेखा करते हुए सी.बी.आई. के आरोप पत्र के अनुकूल बयानों को जगह दी। नतीजतन, चश्मदीद गवाहों के इन बयानों की पुष्टि के बावजूद कि पारधीढाना के विध्वंस में प्रशासन की मिलीभगत थी, शर्मा ने आरोप पत्र में सारे दोष ग्रामीणों और नेताओं पर लगाकर प्रशासन को दोषमुक्त घोषित कर दिया।

बोन्द्रु और डोडेलबाई के मामले में, पारधी चश्मदीद गवाह द्वारा नामज़द नेता और पुलिस अधिकारी को दोषमुक्त करने के लिए सभी पारधी चश्मदीद गवाहों के बयानों को आरोप पत्र में शामिल ही नहीं किया गया। अंततः, शर्मा ने अपनी रपट में विस्थापित महिलाओं के साथ बलात्कार के मामलों को अनदेखा कर दिया और कोर्ट में कहा कि चूंकि मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने कथित बलात्कारों की विशिष्ट जांच का आदेश नहीं दिया था, इसलिए सी.बी.आई. ने इसकी जांच करना या इसके आरोप पत्र दाखिल

करना ज़रूरी नहीं समझा। ऐसा इस तथ्य के बावजूद किया गया कि महिलाओं के बयान लिए गए थे, सी.बी.आई. द्वारा भी (देखें अध्याय 'महिलाओं का शरीर जंग का मैदान')।

आगे हम उन कई तरीकों पर विचार करेंगे कि पारधीढाना में विध्वंस करने और डोडेलबाई का बलात्कार और हत्या तथा बोन्द्रु की हत्या करने में सी.बी.आई., पुलिस और प्रशासन की मिलीभगत को छिपाने के लिए तीनों एजेन्सियों ने कैसे साथ काम किया।

29 मार्च 2012 को दाखिल पहला आरोप पत्र

यह पहला आरोप पत्र एक दिलचस्प अध्ययन है कि कैसे यह ज़रूरी नहीं कि सी.बी.आई. की जांच रपट और इसके चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य में तालमेल हो। यह वही दस्तावेज़ है जिसमें पारधीढाना विध्वंस मामले में 82 दोषियों को नामज़द किया गया था।

अपनी जांच रपट में सी.बी.आई. ने 1995–96 से पारधी परिवारों के चौथिया में बसे होने का दावा किया है, और इस प्रकार बसाहट एवं पट्टा आवंटन की तारीख का मिलान किया है। फिर वह दावा करता है कि अनसुइया के बलात्कार और हत्या के कारण ही चौथिया के पारधियों के खिलाफ आक्रोश उभरा था। वो इस बात की ओर ध्यान दिलाता है कि विध्वंस की तैयारी में प्रशासन और पुलिस, दोनों की मिलीभगत है लेकिन आगे दावा ये किया गया है कि प्रशासन से पहले गांववालों और नेताओं ने विध्वंस शुरू किया था। इसने पुलिस और प्रशासन की मिलीभगत पर चुप रहकर 82 आरोपियों को नामज़द कर उन पर धारा 147, 148, 149 के तहत आरोप लगाये, जिन्हें कि आईपीसी की धारा 380, 426, 427, 436, 447 और 451 के साथ पढ़ा जाए।[4] अंत में, सी.बी.आई. ने अपने आरोप पत्र में कहा है कि इस मामले की गंभीर प्रकृति को देखते हुए वह आरोपी को गिरफ्तार नहीं करेगी, इसलिए उसने पुलिस को गिरफ्तारी करने के लिए कहा है। चूंकि आरोप पत्र में पुलिस को बरी कर दिया गया है, इसलिए पुलिस को उन लोगों को गिरफ्तार करने का कहकर, जिन्होंने कि विध्वंस किए जाने में उनका साथ दिया था, बिखरे हुए सिरों को बांधने का एक अच्छा तरीका निकाला था।

ज़ाहिर तौर पर, इस मामले में अपनी उपयुक्तता के कारण सी.बी.आई. द्वारा जिन चश्मदीद गवाहों की गवाहियों को चुना गया, उनकी छानबीन से उन तरीकों का पता चलता है जिनके द्वारा सी.बी.आई. ने आरोपों को कमज़ोर कर दिया था और आरोपियों की एक चुनिन्दा सूची तैयार की।

सी.बी.आई. की रपट ने अनसुइयाबाई के बलात्कार व हत्या तथा विध्वंस पर ध्यान केन्द्रित करके पारधियों के खिलाफ बहुसंख्यक और लोकलुभावन धारणाओं के सन्दर्भ को नज़रअंदाज़ करके पूरी स्थिति का एक अति सरल चित्र प्रस्तुत किया है। ऐसा वह पारधीढाना बसाहट के इतिहास को गलत तरह से प्रस्तुत करके करती है:

जांच बताती है कि वर्ष 1995–96 में कुछ पारधी परिवार महाराष्ट्र से पलायन कर आए और चौथिया गांव में अपने घर बना लिए... समय गुज़रने के साथ और पारधी परिवारों ने अलग–अलग जगहों से पलायन कर खुले पट्टों की जगहों पर अपना घर बनाना शुरू कर दिया तथा परिवार के विस्तार के साथ धीरे–धीरे उनकी संख्या बढ़ती गई।

यह सी.बी.आई. को दिए गए रत्ना पारधी के बयान से इतर है। वह उन लोगों में से एक है जिनके पास पट्टा था। वह साफ तौर पर कहती है कि वे महाराष्ट्र से नहीं हैं और उसके मां–बाप और ससुराल वाले दोनों चौथिया में रहते थे। उसके अनुसार, दरअसल अल्सिया समूह महाराष्ट्र से आया हुआ था।

रपट आगे कहती है, ''जांच ने खुलासा किया कि पारधीढाना के निवासी पारधियों के खिलाफ रोष तब प्रबल हुआ जब 09.09.2007 को कुछ पारधियों ने मुलताई तहसील के सांडिया गांव की कुन्बी जाति की अनसुइयाबाई का बलात्कार कर हत्या कर दी थी।'' इस प्रकार से, यह न केवल कुछ लोगों के अपराध को पूरे एक समुदाय पर स्थानांतरित कर देती है बल्कि यह पारधियों के खिलाफ स्थानीय लोगों के रोष को बिना प्रश्न उठाए स्वीकार कर लेती है। आरोप पत्र पारधियों के प्रति बहुलतावादी राजनीति के परिणामस्वरूप उत्पन्न सामान्य असहिष्णुता को छिपाने में सफल रहता है और विध्वंस को बदले की एक न्यायोचित कार्यवाही की तरह प्रस्तुत करता है।

सी.बी.आई. रपट स्वयं पुलिस और प्रशासन की तरफ इशारा करती है। फिर भी अभी तक एक भी प्रशासनिक या पुलिस अधिकारी को इस मामले में अभियुक्त नहीं बनाया गया है। अन्य बातों के अलावा रपट दावा करती है कि,

स्थानीय प्रशासन ने यह घोषणा की थी कि 11.09.2007 तक पारधी बस्ती के अनाधिकृत निवासियों को स्थानीय प्रशासन द्वारा हटा दिया जाएगा... इस निर्णय और घोषणा के कारण प्रत्येक व्यक्ति को यह पता चला था कि प्रशासन पारधीढाना को हटाने जा रहा है... पारधियों के खिलाफ तनावपूर्ण स्थितियों को देखते हुए 09.09.2007 को सुबह नौ–दस बजे के लगभग उन्हें मुलताई पुलिस थाने ले जाया गया। चूंकि अनसुइयाबाई के बलात्कार और हत्या में पारधियों की संलिप्तता पायी गई थी इसलिए पुलिस ने पारधियों को वापस पारधीढाना नहीं जाने दिया और उन्हें मुलताई थाने के परिसर में ही रात बितानी पड़ी। अगले दिन, दोपहर बाद पारधियों को वापस पारधीढाना ले जाया गया और 51 अतिक्रमणकारियों के खिलाफ नोटिस जारी किया गया। ...उन्हें पुलिस और प्रशासन द्वारा आश्वस्त किया गया कि उनके सामान को सुरक्षित रखा जाएगा... उनको (जिन पारधियों को नोटिस दिया गया था) सुनवाई के लिए थोड़ी भी मोहलत नहीं दी गई... मुलताई नगरपालिका के मुख्य नगरपालिका अधिकारी ने 10 पुरुष और 10 महिला 'जनसेवकों' को ड्राइवर के साथ नियुक्त किया... मुलताई तहसील के तहसीलदार, नायब तहसीलदार, राजस्व निरीक्षक, पटवारी, चपरासी इत्यादि को मुलताई के एसडीएम ने पारधीढाना में उपस्थित होने के निर्देश दिए।

पारधीढाना का एक भी व्यक्ति अनसुइया के बलात्कार और हत्या में शामिल नहीं था। फिर भी सी.बी.आई. जांच अधिकारी ने अपने आरोप पत्र में इस बाबत् लगे आरोपों को तो जगह दे दी लेकिन पुलिस और प्रशासन के विध्वंस में शामिल होने के तथ्य को अनदेखा कर दिया। उस समय के एसडीओपी, दिनेश कुमार साकल्ले ने स्वीकार किया कि अपर कलेक्टर मसूद अख्तर ने 09.09.2007 को उत्तेजित गांववासियों से कहा था कि पारधीढाना को तीन दिन में हटाया जाएगा, और 10.09.2007 को कलेक्टर, अपर कलेक्टर, पुलिस सुपरिंटेंडेंट, उप–प्रभागीय

मजिस्ट्रेट और तहसीलदार स्थानीय नेताओं हिरेन लोखंडे और राजा पवार से मिले और पारधीढाना के अवैध हिस्से को अगले ही दिन, चौबीस घंटे के भीतर, हटाने का तय किया। इस मीटिंग के आधार पर, विध्वंस के लिए लोगों की व्यवस्था मुलताई नगर पालिका ने की थी। ऊपर से साकल्ले अपनी गवाही में यह भी स्वीकार करते हैं कि उन्होंने ही ढहाने वाली जेसीबी मशीन की व्यवस्था की थी, मशीन के ठेकेदार ने इस तथ्य की पुष्ट भी की थी। एस.डी.एम. विट्ठलराव इंगले अपनी गवाही में कहते हैं कि उसने सिर्फ अपर कलेक्टर मसूद अख्तर के 11.09.2007 को पारधीढाना को ढहाने के मौखिक आदेश पर कार्यवाही की थी। तहसीलदार शैलेन्द्र हनोतिया कहते हैं कि 09.09.2007 की शाम को उसके ऑफिस में बेदखली नोटिस लिखने में उसने और उसके स्टाफ ने चौथिया के सरपंच सुरेश पाटेकर की मदद की थी। दूसरे शब्दों में, इसका मतलब यह हुआ कि पारधीढाना के विध्वंस को चौथिया ग्राम पंचायत की मंजूरी नहीं मिली थी, बल्कि प्रशासनिक फैसला सुनाकर इसे अंजाम दे दिया गया। हनोतिया यह भी कहते हैं कि उसने नगर निगम को विध्वंस के लिए स्वयंसेवक और ड्राइवर उपलब्ध कराने के मौखिक आदेश दिए थे।

हालांकि हनोतिया के अधीनस्थ पटवारी, सुरेन्द्र कुमार गुलाटकर, बेदखली नोटिस की तारीख को लेकर मतभेद रखते हैं। गुलाटकर कहते हैं कि 10.09.2007 को उन्होंने चौथिया ग्राम पंचायत के सरपंच और सचिव को तहसीलदार हनोतिया के ऑफिस में पाया था, उन दोनों ने ही कहा था कि पारधीढाना की अवैध बसाहट को ढाने का कोई भी लिखित या मौखिक प्रस्ताव चौथिया की ग्राम सभा द्वारा पारित नहीं किया गया था। वह आगे कहते हैं कि हनोतिया ने अपने पटवारियों से बेदखली नोटिस तैयार करवाए थे और चौथिया के सरपंच सुरेश पाटेकर से इस पर केवल साइन करवाया था। पाटेकर खुद अपने बयान में कहते हैं कि उन्होंने कभी कोई बेदखली नोटिस जारी नहीं किया था और सभी नोटिस तहसीलदार के ऑफिस में तैयार किए गए थे, जहां उन्होंने उन पर दस्तखत किए थे।

हनोतिया ने यह तथ्य भी स्वीकार किया कि विध्वंस के बाद, विध्वंस के काम को कानूनी साबित करने के लिए 12.09.2007 को कलेक्टर ने उनसे एक फर्जी प्रस्ताव बनवाया। दूसरे उच्च अधिकारियों की मदद से उन्होंने 15.08.2007, 25.08.2007, 31.08.2007, 09.09.2007 और 11.09.2007 की तारीख वाले प्रस्ताव तैयार किए। यह तथ्य उस समय के कलेक्टर अरुण भट्ट द्वारा प्रस्तुत बचाव पर भी प्रश्न उठाता है। अपनी गवाही में भट्ट कहते हैं कि ग्राम पंचायत के निर्णयों पर प्रशासन का कोई बस नहीं चलता। निश्चित रूप से जब इस तरह का कोई फैसला लिया ही नहीं गया हो तो प्रशासन के लिए विध्वंस में मदद करने का कोई औचित्य ही नहीं होता!

पटवारी गुलाटकर की गवाही यह भी कहती है कि पुलिस और प्रशासन ने आगजनी और विध्वंस को रोकने के लिए कुछ भी नहीं किया। और यह भी कि शाम को उसे तहसीलदार हतोनिया द्वारा कुल हुए नुकसान का पंचनामा तैयार करने के लिए बुलाया गया, बावजूद इसके कि कोई नहीं जानता कि कितना नुकसान हुआ था क्योंकि पुलिस और प्रशासन के देखते हुए भी पूरे इलाके को ढहाने के बाद आग लगाकर राख में तब्दील कर दिया गया था।

पंचनामा में दस्तखत करने वालों में से एक,

शेषराव महादेवराव आनबने भी गवाही देते हैं कि जब वास्तव में विध्वंस और आगजनी की घटना हुई तब वह वहां उस जगह पर थे ही नहीं, उन्होंने नुकसान की हद जाने बिना ही पंचनामा पर दस्तखत कर दिए थे और वह यह भी नहीं जानता था कि पंचनामा में लिखा क्या था। टी.आई. मौजीलाल वर्मा कहते हैं कि इसी बीच जब 10.09.2007 की शाम को विस्थापित होने वाले पारधी पारधीढाना में वापस आ रहे थे, तो उसने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर 51 अवैध निवासियों को सरपंच द्वारा हस्ताक्षरित बेदखली नोटिस दिया था। वर्मा इसका भी ज़िक्र करते हैं कि कैसे वह उनको नोटिस देते समय किसी भी व्यक्ति का नाम तक नहीं जानता था। अंततः पुलिस और प्रशासन की सभी चश्मदीद गवाहियां विध्वंस में शामिल नेताओं की उपस्थिति को प्रमाणित करती हैं। तब ऐसा क्यों है कि पुलिस ने नाम जानते हुए भी प्राथमिकी को 2000 अनजान व्यक्तियों के खिलाफ बनाया?

ये स्पष्ट है कि, पुलिस और प्रशासन तंत्र विध्वंस करवाने में सक्रिय रूप से हरकत में आया। लेकिन इस बात को दर्ज करने की बजाय, सी.बी.आई. की जांच रपट में विध्वंस को अंजाम देने वाले सभी लोगों को गवाहों में बदल दिया गया। यह रपट इस विरोधाभासी तथ्य को भी पूरी तरह से नज़रअंदाज़ करती है कि एक तरफ तो पुलिस की गवाहियां इस बात के प्रति अनजान होने का दावा करती हैं कि नौ तारीख को पारधीढाना निवासी मुलताई पुलिस स्टेशन कैसे पहुंचे और दूसरी तरफ विस्थापित लोगों की सभी गवाहियां सिलसिलेवार यह बताती हैं कि कैसे उनको पुलिस की गाड़ियों से पुलिस स्टेशन, वापस पारधीढाना और फिर मुलताई रेलवे स्टेशन ले जाया गया। पुलिस और प्रशासन को बरी कर दिए जाने के मुख्य कारण हैं कि अ) वह दावा करते हैं कि उनके पारधीढाना पहुंचने से पहले ही विध्वंस शुरू हो चुका था, और ब) उन्होंने भीड़ को शांत करने की कोशिश की थी लेकिन भीड़ की संख्या उनसे ज़्यादा थी। दूसरी तरफ, चश्मदीद गवाहों ने इस जांच टीम को बताया था कि भीड़ को वश में करने के लिए न्यूनतम पुलिस बल का भी इस्तेमाल नहीं किया गया, जबकि दमकल गाड़ी सिर्फ खड़ी ही रही। यह विध्वंस के वीडियो साक्ष्य से भी प्रमाणित हुआ। तथ्य ये हैं कि पुलिस और प्रशासन के सक्रिय रूप से विध्वंस की व्यवस्था में शामिल होने, विध्वंस के आरोपियों से सम्पर्क में होने और चुप्पी साध लेने की बात को आरोप पत्र में नज़रअंदाज़ कर दिया गया। उन लोगों को बरी कर दिया गया जिन्होंने एक अवैध विध्वंस और विस्थापन को अंजाम देने की स्थितियां बनाई थीं और वे इस क्षेत्र और आसपास में शासन चलाने वाली नौकरशाही का लगातार हिस्सा बने हुए हैं!

दूसरी तरफ, सी.बी.आई. अपने आरोप पत्र से विस्थापित पारधियों के नुकसान को मिटा देने में प्रभावी रूप से सफल हुई। साथ ही उसने ऐसा दिखावा किया कि डोडेलबाई के बलात्कार और हत्या और बोन्द्रु की हत्या का सम्बन्ध उस उन्माद से नहीं था जिसके चलते विध्वंस हुआ था। नतीजतन, आरोपियों के खिलाफ लगाए गए सभी आरोप दंगा भड़काने के तुलनात्मक रूप से कम संगीन धाराओं के रूप में दर्ज हैं।

10 अप्रैल 2012 को दाखिल दूसरा आरोप पत्र

इस मामले में सी.बी.आई. जांच रपट डोडेलबाई के बलात्कार व हत्या और बोन्द्रु की हत्या के

चश्मदीद गवाहों को चुप करा के, अपने आरोप पत्र में डोडेलबाई के बलात्कार के मुद्दे की उपेक्षा करने में पूरी तरह से कामयाब रही। मृतक दम्पत्ति की बेटी रामप्यारी व बेटे लंगड़ और तीन अन्य पारधियों की चश्मदीद गवाहियों के कागज़ात गुम हो गए। यह बहुत गंभीर है क्योंकि इन गवाहों ने अपने बयानों में मुलताई के कांग्रेस पार्टी के विधायक, सुखदेव पानसे; बैतूल जिला पंचायत के उपाध्यक्ष और बीजेपी के नेता, राजा पवार और पुलिस के एक एसडीओ, दिनेश साकल्ले को अपराधों के पीछे प्रमुख दोषी बताया था।

इस बलात्कार और हत्याओं के चश्मदीद गवाहों ने रेंके आयोग, पुलिस और सी.बी.आई. के कई जांच अधिकारियों से बातचीत की थी। उन्हें उस जगह भी ले जाया गया जहां से डोडेलबाई और बोन्द्रु के शव बरामद हुए थे।

चश्मदीद गवाहों के अनुसार, सी.बी.आई. जांच अधिकारी ने पहले उन्हें धमकी दी और फिर किन्हीं भी स्थानीय राजनेताओं के नाम न लेते हुए उन्हें अपनी गवाहियों में बदलाव करने के लिए कहा। लेकिन, जब चश्मदीद गवाहों ने मानने से इंकार कर दिया तो सी.बी.आई. ने उनकी गवाहियों को ही नज़रअंदाज़ कर दिया। आरोप पत्र में सी.बी.आई. जांच की तारीखें नवम्बर 2012 की हैं, इस तरह से इसने अक्टूबर 2009 से चल रही जांच को खारिज कर दिया है। बलात्कार को अनदेखा कर और चश्मदीद गवाहों के बयानों को मिटाकर सी.बी.आई. और पुलिस ने ताकतवर अपराधियों के लिए दंडमुक्ति का एक माहौल बनाने में मदद की।

पारधियों की गवाहियों को जांच रपट से हटा दिया गया क्योंकि उन गवाहियों से कई प्रभावी व्यक्तियों के खिलाफ बलात्कार और हत्या के आरोप सिद्ध हो जाते। इसकी बजाय, जिनके खिलाफ मुकदमा चलना चाहिए था – जैसे कि वह डॉक्टर, जिसने बोन्द्रु का पहला पोस्टमॉर्टम कर इसे एक स्वाभाविक मौत बताया था और जिसने इसके जाली पंचनामा में दस्तखत किए थे – उन्हें गवाह के रूप में इस्तेमाल किया गया। मृत दम्पत्ति के बच्चे रामप्यारी और लंगड़, जिन्होंने कई अलग–अलग आयोगों, पुलिस और सी.बी.आई. अधिकारियों के समक्ष कई बार बयान दिए थे, हिचकते हुए इस जांच टीम से बात करने को तैयार हुए। उनके मां–बाप की हत्याओं की उनकी चश्मदीद गवाहियों को अनदेखा कर दिए जाने के कारण वे निराश और गुस्से में थे और उन्हें भरोसा नहीं था कि उन्हें कभी न्याय मिल पाएगा। सी.बी.आई. के कई जांच अधिकारियों द्वारा लगभग यातना के रूप में उनसे बार–बार घटना का ब्यौरा पूछा गया और प्रतिप्रश्न किए गए।

रामप्यारी और लंगड़ के अनुसार, चौथिया की पारधी बस्ती में गैरकानूनी विध्वंस, आगजनी और लूटपाट की शुरुआत 11 सितंबर 2007 की सुबह हुई। 10 सितंबर को पारधियों का एक समूह जानवरों को चराने और शिकार करने जंगल गया हुआ था और वे उस समय वहां उपस्थित नहीं थे जब बाकी पारधी समुदाय को निशाना बनाया गया और जिला प्रशासन द्वारा उन्हें भोपाल भेज दिया गया। गांव में कुछ पुलिस कार्यवाही की भनक लगने के कारण पारधियों का यह समूह जंगल में ही रुक गया। वे अपनी बस्ती में वापस आ रहे थे, लेकिन पारधीढाना से धुआं आता देखकर वे रुक गए और उन्होंने महाराष्ट्र की तरफ जाने का फैसला किया। उन्होंने आदमियों से भरे ट्रैक्टरों को भी गांव की तरफ जाते देखा।

डोडेलबाई और उसका पति बोन्द्रु बाकी लोगों से कुछ आगे थे। एक ट्रैक्टर के आदमियों ने उनको देख लिया और दोनों को पकड़ लिया। इसे देखकर पारधीढाना के बाकी निवासी आसपास के खेतों की लंबी घास में छुप गए। उन सबने अपने सामने हो रही भयावह घटनाओं को घटते देखा।

आदमियों ने बोन्द्रु को लातें मारना शुरू कर दिया और इसे जारी रखने के लिए एक–दूसरे को उत्साहित कर रहे थे जबकि दूसरे उन्हें उकसा रहे थे कि वे उसे पत्थरों से मारें। इस हमले से बोन्द्रु नीचे गिर पड़ा। आदमियों ने उसे लाठियों से मारा और दूसरी पोस्टमॉर्टम रपट में उसकी पीठ पर 'लंबे निशानों' का स्पष्ट ज़िक्र है जो बतलाते हैं कि उसे आदमियों के समूह द्वारा लाठियों से पीटा गया था। रामप्यारी ने बताया कि सुखदेव पानसे, राजा पवार और विजय डॉक्टर पहले व्यक्ति थे जिन्होंने बोन्द्रु पर लाठियों से हमला किया था और फिर एसडीओपी ने आकर उन्हें यह कहते हुए रोका कि वे उसकी हत्या में फंस जायेंगे।

फिर 6–7 आदमियों ने, जो कि डोडेलबाई को पकड़े हुए थे, उसे ज़मीन पर फेंक दिया और उसके साथ एक–एक करके बलात्कार किया। इस हमले के नतीजन या तो वो बेहोश हो गई या फिर मर गई। तब आदमियों ने उसे उठाया और पास के एक कुएं में फेंक दिया। रामप्यारी और लंगड़ ने बताया कि चूंकि वे झाड़ियों में छिपे हुए थे, इसलिए उन्हें पक्का मालूम नहीं था कि जब उसे कुएं में फेंका गया तब वो ज़िंदा थी या नहीं। उसकी पोस्टमॉर्टम रपट में भी अनिश्चित है कि वह फेंके जाने से पहले ही मर चुकी थी या कुएं में डूबने की वजह से उसकी जान गई।

पारधी कैम्प की कुछ महिलाओं, जिनसे जांच टीम ने बात की थी, ने आरोप लगया कि डोडेलबाई की योनि में पत्थर पाए गए थे। पोस्टमॉर्टम रपट में इसकी पुष्टि नहीं की गई थी। हालांकि, पहली रपट की सच्चाई अपने आप में ही संदिग्ध है, जैसे कि रिकॉर्ड में है कि मुलताई पुलिस थाने के स्टेशन हाउस प्रभारी और कार्यकारी मजिस्ट्रेट द्वारा तैयार किए गए डोडेलबाई की चोट के पंचनामे और मुलताई अस्पताल के मेडिकल ऑफिसर द्वारा तैयार की गई पोस्टमॉर्टम रपट में बलात्कार का ज़िक्र नहीं है और मौत का कारण डूबने को बताया गया है क्योंकि उसकी लाश एक कुएं में पाई गई थी।

सी.बी.आई. ने डोडेलबाई और बोन्द्रु की हत्या के लिए पास के गांव ताइखेड़ा के सरपंच हीरालाल लोखंडे को दोषी ठहराया है और 16 अन्य लोगों को नामों सहित आरोपी बनाया है। सी.बी.आई. की यह जांच रपट जिस सूचना पर आधारित है वह दो चश्मदीद लोगों की गवाही है। विडम्बना यह है कि अन्य आरोप पत्रों के

विपरीत, दो लोगों की हत्या करने वाले असामाजिक भीड़ में शामिल लोगों में से किसी पर भी आरोप पत्र दाखिल नहीं किया गया है। इस बीच लोखंडे जमानत पर बाहर है।

समय बिताने और तथ्यों को उलझाने की शर्मनाक कोशिश में आरोप पत्र में डोडेलबाई के साथ हुए बलात्कार को पूरी तरह से अनदेखा कर दिया गया। एक बार अदालत अगर यह दर्ज कर ले कि सी.बी.आई. ने जांच की है तो इस आरोप पत्र में छूट गए तत्वों पर सवाल उठाने के लिए एक नया मुकदमा दायर करने की ज़रूरत होगी।

---

[2]अंग्रेज़ी में जारी सी.बी.आई. रपट के उद्धरणों का हिन्दी अनुवाद यहां प्रस्तुत किया गया है।

[3]धारा 147, दंगे के लिए सज़ा, दो साल या जुर्माना या दोनों; धारा 148, दंगे, घातक हथियारों से लैस, तीन साल या जुर्माना या दोनों; धारा 149, एक ही उद्देश्य के लिए गैरकानूनी तरीके से जमघट लगाना; धारा 186, सार्वजनिक कार्यों का निर्वहन करने से सरकारी नौकरों को रोकना, तीन महीना या पांच सौ रुपए का जुर्माना या दोनों; धारा 427, गड़बड़ी करना जिससे पचास रुपए तक की कीमत का माली नुकसान हो, दो साल या जुर्माना या दोनों; धारा 436, घर को नष्ट करने के इरादे से आग या विस्फोटक पदार्थ से हानि पहुंचाना, उम्र कैद या जुर्माने के साथ 10 साल तक की सज़ा।

[4]धारा 380, रिहायशी घर में चोरी आदि, सात साल तक की सज़ा और जुर्माना भी; धारा 426 शरारत करने के लिए सज़ा, तीन महीना या जुर्माना या दोनों; धारा 447, अपराध करने के लिए बिना अनुमति के प्रवेश की सज़ा, तीन महीना या 500 रुपए तक का जुर्माना या दोनों; धारा 451, अपराध करने के लिए घर में अनाधिकार प्रवेश, सात साल तक की सज़ा। शेष धाराओं के लिए पिछला फुटनोट देखें।

अध्याय 4

औरतों का शरीर जंग का मैदान

सी.बी.आई. के दोनों आरोप पत्रों ने बलात्कार के आरोपों को सिरे से नज़रअंदाज़ कर दिया है और जिन महिलाओं ने बलात्कार के आरोप लगाए थे उनके चिकित्सीय परीक्षणों के नतीजे अभी भी अविदित हैं। अफसोस की बात है कि कानून में यह होने के बावजूद कि बेगुनाही को सिद्ध करने की ज़िम्मेदारी बलात्कारी की है, महिलाओं को एक ऐसे माहौल में न्याय की मांग करनी पड़ रही है जहां बहुत कम लोग ही उन पर विश्वास करते हैं।

एक बार फिर दोहरा लें कि 9 सितम्बर 2007 को, जब एक कुन्बी महिला अनसुइयाबाई की हत्या कर दी गई थी, तो पास के चौथिया गांव के बाहरी छोर पर रहने वाले पारधी समुदाय को दोषी ठहराया गया था। 10 सितम्बर 2007 को, जब अन्य लोगों को वैन में भरा जा रहा था, तो 10 पारधी महिलाओं को यह कहकर कि वैन में बिल्कुल जगह नहीं थी, वहीं रोक लिया गया था। एसडीओपी साकल्ले ने कहा कि उन्हें अगली वैन से चौथिया के बाहर भेज दिया जाएगा। महिलाओं ने पुरुषों को आपस में बात करते हुए सुना कि ''अच्छे–अच्छे को छांट लो''। चूंकि एसडीओपी और तहसीलदार वहां मौजूद थे इसलिए महिलाओं को क्या होगा इसके बारे में कोई शक नहीं था। उसके बाद पुरुषों ने उन्हें अल्सिया पारधी के घर के बाहर बिठा दिया। हालांकि, बाकी पारधियों को गांव से बाहर भेजने के तुरन्त बाद ही एसडीओपी और तहसीलदार भी चौथिया से चले गए थे।

महिलाओं के अनुसार, वहां रह गए पुरुषों में कुछ स्थानीय नेता, गांव के तब के सरपंच और स्थानीय लोग थे। महिलाओं ने देखा कि पुरुष एक प्रकार की गोली खा रहे थे जिससे कि उन्हें नशा–सा हो रहा था। महिलाओं ने पुरुषों को आपस में बात करते हुए सुन लिया, ''हम उनकी महिलाओं के साथ वही करेंगे जो कि उनके आदमियों ने सांडिया गांव की महिला के साथ किया था।'' उसके बाद आदमी महिलाओं को घसीटते हुए अलग–अलग कमरों में ले गए और एक–एक करके उनके साथ बलात्कार करना शुरू कर दिया। हरेक महिला को याद है कि उनके साथ कम से कम दो–तीन आदमियों ने बलात्कार किया था। उन्हें दूसरे कमरों से आ रही एक–दूसरे की चीखें भी याद थीं। ये सब हो जाने के बाद आदमी वहां से चले गए। महिलाओं ने हड़बड़ी में, जो भी साड़ियां उस घर में मिल पाईं वही पहन लीं क्योंकि उनके अपने कपड़े पहनने लायक स्थिति में नहीं थे।

उसके बाद उन्हें गाड़ियों में भरकर मुलताई स्टेशन ले जाया गया और भोपाल जाने वाली किसी गाड़ी में बिठा दिया गया। महिलाएं उसी रात भोपाल स्टेशन पहुंच गईं और उन्होंने तुरन्त ही अपने घरवालों को बताया कि उनके साथ क्या हुआ था। गौरतलब है कि महिलाओं ने कहा कि इस घटना के पहले कभी भी गांव के किसी भी आदमी ने उनके साथ ऐसा 'गलत' व्यवहार नहीं किया था। इसलिए जब उन्हें अपने गांव में रोक लिया गया तो उनके पास चिंता करने का कोई कारण ही नहीं था।

महिलाओं ने कई बार अलग–अलग एजेन्सियों को अपने बयान दिए। पहली बार रेंके आयोग को दिए थे। आयोग की रपट कहती है, ''रात के आठ बजे के लगभग 11 महिलाओं को गांववालों, पुलिस और नेताओं द्वारा रोककर रखा गया। इन 11 महिलाओं के साथ बलात्कार किया गया। महिलाओं ने बलात्कारियों के नाम भी बताए। आठ युवतियों ने आयोग के सामने गवाही दी कि घरों को जलाए जाने से पहले शाम में, यानी कि 10 सितम्बर 2007 को, उनके साथ बलात्कार किया गया था। कुछ ही घंटों बाद इन महिलाओं को अपने घरवालों के पास पहुंचा दिया गया।'' आयोग को बताया गया था कि इन 11 महिलाओं में से एक को मारकर कुएं में फेंक दिया गया था और अन्य दो के किसी दूसरे शिविर में होने के कारण वे उपस्थित नहीं हो पाई थीं।

इसके बाद स्थानीय पुलिस ने उनके बयान लिए लेकिन महिलाओं को यह नहीं बताया गया कि एफ.आई.आर. दर्ज हुई या नहीं। उन्होंने मान लिया था कि ऐसा कर लिया गया होगा लेकिन हकीकत में पुलिस ने अपने कर्तव्य की उपेक्षा कर एफ.आई.आर. दर्ज नहीं की थी। तीसरी बार, जब मामला सी.बी.आई. को सौंप दिया गया, तो महिलाओं के बयान एक बार फिर से दर्ज किए गए और उसका वीडियो भी बनाया गया। हालांकि, जब सी.बी.आई. ने अपने आरोप पत्र दायर किए तो उसमें कहीं भी बलात्कार का कोई ज़िक्र नहीं था। उनमें से एक महिला ने यह भी बताया कि जब वह अपने बयान दर्ज करा रही थी, तो एक समय पर जांच कर रहे अधिकारी एम.एस. खान ने महिला अधिकारी रेणु को कमरे से चले जाने के लिए कहा और फिर पारधी महिला से आपत्तिजनक और अपमानजनक सवाल पूछे, जैसे कि, ''आदमी कितने बड़े थे?'', ''उनका लिंग कितना बड़ा था?'' आदि। महिलाओं को इतना अपमानित किया गया कि बहुत बाद तक भी उन्होंने किसी से भी इस बारे में बात नहीं की थी (यहां तक कि आपस में भी)।

एक बलात्कार का बदला लेने के लिए महिलाओं का बलात्कार करना (इस मामले में, अपराधी अज्ञात थे और किसी भी तरह से मुलताई के पारधियों से जुड़े नहीं थे) यह जताता है कि कैसे एक पूरे समुदाय को चुप कराने के लिए लैंगिक हिंसा को दमन के हथियार की तरह इस्तेमाल किया जाता है। महिलाओं को ''बेइज़्ज़त'' करके बहुसंख्यक समुदाय अल्पसंख्यक समुदाय से अपना बदला लेना चाहता था। लेकिन पारधी महिलाओं ने चुप न रहकर और उनके साथ हुए बर्ताव को सहन न करके अपनी हिम्मत दिखा दी। वे अभी भी इस बारे में बात करने को तैयार हैं, यह बात हमें भी हौसला देती है कि हिंसा उनको चुप नहीं करा सकी। हालांकि, किसी भी जांच एजेन्सी ने महिलाओं के मामलों को किसी भी तार्किक निष्कर्ष तक नहीं पहुंचाया है।

महिलाओं को दोहरी मार सहनी पड़ती है और अक्सर उन पर होने वाली हिंसा का दोष उन्हीं पर डालते हुए इसका कारण भी उन्हें ही बताया जाता है। यह एक ऐसा नज़रिया है जिस पर कि सी.बी.आई. विश्वास करती प्रतीत होती है। इस मामले में न केवल 10 महिलाओं के साथ सामूहिक बलात्कार ही हुआ था, बल्कि उनको पारधी समुदाय के भीतर से भी अपने साथ हुए इस जघन्य अपराध के परिणामों का सामना करना पड़ा। इसके अलावा, सी.बी.आई. भी इस तथ्य पर विश्वास करती है कि सार्वजनिक चर्चा में भी पारधी महिलाओं को सम्मान नहीं दिया जाता है और उन्हें 'चालू' की तरह देखा जाता है। जांच टीम को भी इन महिलाओं के झूठ बोलने और फिरौती के उनके प्रयास के आरोपों के बारे में बताया गया। उनकी किसी भी बात का कोई सम्मान नहीं करता है, तो कोई भला उनका बलात्कार क्यों करेगा? पुलिस भी बार–बार यही दोहराती है, यहां तक कि 14 वर्ष की राजनंदनी के मामले में भी, वह कहती है कि वह अपनी 'स्वेच्छा' से भाग गई थी, या कि समुदाय द्वारा उसे छिपाया गया है।

हमारे समाज के अधिकतर समुदायों की ही तरह पारधियों में भी पितृसत्तात्मक मूल्य गहराई तक बसे हुए हैं। पारधी महिलाओं को अपने समुदाय के भीतर भी दण्ड का सामना करना पड़ा। 2010 में पारधियों के बैतूल में स्थानान्तरित होने के बाद एक पंचायत बुलाई गई थी। विचार–विमर्श के बाद पंचायत ने बलात्कार की पीड़ित उन 10 महिलाओं को समुदाय से निष्कासित करने की घोषणा की। इसके अलावा सभी पुरुष सदस्यों वाली पंचायत ने घोषणा की कि हरेक महिला को 50 हज़ार रुपए दण्ड देना होगा और एक दावत देनी होगी जिसमें कि मांस और मदिरा परोसनी होगी, जब तक कि वे दण्ड नहीं चुका देतीं तब तक उन्हें समुदाय से अलग रहना होगा, यानी कि उस समय तक वे खाना नहीं बना सकतीं और न ही समुदाय में किसी को भोजन परोस सकती हैं और शादी व अन्य समारोहों का हिस्सा होने से भी अलग रहना होगा। एक महिला ने बताया कि उसे अपनी बेटी के शादी समारोह से बाहर रखा गया। चूंकि वह खुद खाना नहीं बना सकती थी इसलिए उसके घरवालों को शादी के लिए बाहर से खाना मंगाना पड़ा। महिलाओं के साथ होने वाले अन्यायपूर्ण व्यवहार के कई पहलू हैं। उन्हें उनके साथ हुए बलात्कार के लिए बार–बार दण्डित किया जा रहा है। साक्षरता के कौशल सीमित या नगण्य होने की वजह से महिलाओं को न्याय के लिए संघर्ष करना तो दूर, अपने साथ हुई हिंसा को अभिव्यक्त करने में भी काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। उनके द्वारा सहन किए जाने वाले अन्याय, कई तरीकों से जाहिर होते हैं:

सबसे पहला है सामूहिक बलात्कार के जघन्य अपराध के आसपास सरकारी चुप्पी और अदृश्यता। 2007 के बाद से विभिन्न अधिकारियों द्वारा कई बार महिलाओं के बयानों को दर्ज किया जा चुका है (वीडियो रिकॉर्डिंग भी हुई है) लेकिन सरकारी दस्तावेज़ों में कहीं भी इसका नामोनिशान नहीं है। नतीजतन, बलात्कारियों को पकड़ने के लिए कोई प्रयास नहीं किए जा रहे हैं। स्पष्ट है कि महिलाओं के साथ हुए सामूहिक बलात्कार को दबाने का प्रयास किया जा रहा है।

दूसरा है प्रशासन का दोगला व्यवहार। हर कदम पर, अधिकारियों का यही प्रयास था कि जल्दी से कैसे यह दिखाया जाय कि पारधी

लोग झूठ बोल रहे थे क्योंकि वे ऐसा करने के आदि थे। उनका रवैया ही पारधी महिलाओं के बलात्कारों को कम करके बताना था, मानो अपराधों का कोई महत्व ही नहीं था। सच्चाई यह है कि इस तथ्य का उन्हीं के खिलाफ इस्तेमाल किया जा रहा है कि महिलाएं अपने साथ हुए बलात्कारों के बारे में हिम्मत से बात कर पाईं और ''सामान्य'' जीवन जी रही हैं। छोटी–सी लड़की, राजनंदनी, के मामले में भी यह सुस्पष्ट है। उनकी यह प्रबल धारणा कि ''उस जैसी लड़की'' तो भाग ही गई होगी अपने आप में समस्याजनक है। कथित तौर पर वन रक्षकों द्वारा अपहरण के मामले को ठीक से जांचा नहीं गया बल्कि उस युवती की स्वेच्छिक कृति मान ली गई।

तीसरा है अपने ही समुदाय द्वारा मिलनी वाली सज़ा। पारधी समुदाय ने महिलाओं की दास्तान को स्वीकार तो कर लिया लेकिन बलात्कारों का 'हिस्सा' होने के लिए उन्हें दण्डित भी किया। महिलाओं द्वारा सहे जाने वाले अन्याय में ये दण्ड भी जुड़ गया। महिलाओं पर लगाए गए 50 हज़ार रुपए के जुर्माने को ही लें। पारधी समुदाय के पास पैसा कमाने का कोई साधन नहीं है। महिलाओं का मुख्य पेशा भीख मांगना प्रतीत होता है। उन्हें भीख में खाना या पैसा मिलता है जिसका इस्तेमाल परिवार को खिलाने और आवश्यक चीज़ें खरीदने में किया जाता है। फिर महिलाओं को इस तरह के कठोर जुर्माना को चुकाने में कितना समय लग जाएगा? क्या उन्हें ऐसे अपराधों के लिए, जो उन्होंने किया ही नहीं है, ज़िन्दगी भर सज़ा भुगतनी होगी? महिलाओं को सामुदायिक कार्यों में भाग लेने की अनुमति नहीं है, संभवतः क्योंकि वे 'दूषित' हैं। हालांकि, उनके बच्चे होना जारी हैं, ज़ाहिर है, एक 'दूषित' महिला के साथ संभोग करने में कोई कलंक नहीं है। पुरुषों में से कुछ अपनी पत्नियों पर अपना गुस्सा उतारते हैं। पारधी बस्तियों में घरेलू हिंसा की समस्या उभरने लगी है।

यह दोहराना महत्वपूर्ण है कि कैसे महिलाएं हिम्मत करके बाहर निकलीं और सार्वजनिक रूप से बलात्कारों के बारे में बोलीं। जब भी महिलाओं के साथ लैंगिक हिंसा होती है तो उन्हें अपने स्वयं के इरादों और व्यवहारों के लिए ही सवालों का सामना करना होता है। इस बारे में पूछा जाना चाहिए कि समुदाय के अंदर और बाहर, दोनों लोगों के शंकालु व्यवहार का सामना करते हुए पारधी महिलाएं बलात्कार का ''निराधार'' आरोप क्यों लगाएंगी। एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि चूंकि वे ''अच्छी'' महिला होने के मुख्य धारा के बहुत से मानदण्डों का अनुपालन नहीं करती हैं इसलिए वे बदनामी की आसान शिकार बन जाती हैं और समाज एवं प्रशासन दोनों ही उनके आरोपों को नकार देते हैं। प्रशासन के रवैये में जाति भेद और वर्ग भेद के आयाम का उस समय खुलासा हुआ जब एक व्यक्ति ने कहा कि अनुसूचित जाति–जनजाति की महिलाएं मुआवज़ा पाने के लिए ही आजकल बलात्कारों को दर्ज करवा रही हैं।

हालांकि, प्रशासन की उदासीनता और समुदाय के बहिष्कार का सामना करते हुए इन बहादुर महिलाओं का संघर्ष जारी है। वास्तव में, केवल बलात्कारों के खिलाफ नहीं बल्कि पूरे समुदाय के साथ हो रहे अन्याय के खिलाफ न्याय के संघर्ष में महिलाएं ही अगुवाई कर रही हैं।

निष्कर्ष

यह जांच यह समझने के लिए शुरू की गई थी कि विस्थपित लोगों के एक समूह को एक लंबी कानूनी लड़ाई और सी.बी.आई. की जांच के बावजूद पुनर्वास देने से आखिरकार क्यों इंकार किया जा रहा था। इस घटना में कई प्रभावशाली स्थानीय नेता उनके घरों को गिरा देने के मामले में मिलीभगत के आरोपी थे।

यह पहले से ही मालूम था कि विस्थापित लोग पारधी (एक अधिसूचित जनजाति समुदाय से) थे, जिन पर कि पिछले कुछेक चुनावों से इस क्षेत्र में 'बाहरी' होने का ठप्पा लगाया जा रहा था। लेकिन निश्चित ही, सामाजिक पूर्वाग्रह से भी ज़्यादा कुछ था, जिसने उनके विस्थापन और निरंतर दरिद्रता को बढ़ावा दिया था। जैसा कि विस्थापित लोग अदालत में दावा कर रहे थे, अगर सी.बी.आई. की रिपोर्टों के साथ छेड़छाड़ की भी गई हो, तो भी प्रशासन को न्याय देने और पुनर्वास सुनिश्चित करने के लिए कदम उठा लेना था।

जांच खुलासा करती है कि कैसे विस्थापित पारधी, एक प्रशासनिक, तहकीकात सम्बन्धी, आपराधिक और राजनीतिक तंत्र के शिकार हुए जो कि भूस्वामी और धनी समुदायों के प्रभुत्व की निरंतरता सुनिश्चित करते हैं। दक्षिणी मध्य प्रदेश औपनिवेशिक शासकों द्वारा बसाया गया किसानों से भरापूरा एक इलाका है। अपनी इस बसाहट और आबादी की समरूपता की वजह से प्रशासनिक हलकों में यह एक 'शांतिपूर्ण' क्षेत्र माना जाता है। बहरहाल, अब यह इलाका स्थानीय किसानों के जातिगत उभार की जकड़ में है। ये मुख्यतः पिछड़ी जाति, कुन्बी और किराड़, से हैं और मुख्यतः पारधी और हंगरी लोहार जैसी अधिसूचित जनजातियों के खिलाफ अपना वर्चस्व स्थापित करने की कोशिश करते रहे हैं। जिस प्रकार भारतीय राष्ट्र में मुस्लिमों को 'बाहरी' घोषित करार दिया गया है, ठीक उसी प्रकार से स्थानीय स्तर पर, खानाबदोश, अधिसूचित जनजातियों को स्थानीय नेताओं की तुच्छ वोट–बैंक की राजनीति के द्वारा 'बाहरी' घोषित कर दिया गया है। यहां तक कि जांच दल के साथ मुलाकात में कलेक्टर ने भी स्वीकार किया कि पारधी वोट–बैंक की राजनीति के शिकार हुए थे।

लेकिन, स्थिति का विश्लेषण इतने तक ही नहीं रुकता। चौथिया गांव के पारधीढाना के रहवासियों के विस्थापन का मामला उस समय एक भयावह मोड़ लेता है जब पारधियों की दरिद्रता को बढ़ावा देने में प्रशासन, पुलिस और जांच एजेन्सियों की मिलीभगत सामने आ जाती है।

प्रशासनिक और पुलिस मशीनरी न केवल

पारधीढाना के विध्वंस के लिए ज़िम्मेदार थी बल्कि ऐसा भी प्रतीत होता है कि उन्होंने इस इलाके में पारधियों के बारे में पूर्वाग्रहों को हवा देने का भी काम किया। एक निचले स्तर के प्रशासनिक अधिकारी ने कलेक्टर की मौजूदगी में जांच टीम को पुरज़ोर तरीके से यह बताते हुए इन विचारों की पुष्टि की।

विध्वंस पर परदा डालने के उद्देश्य से की गई एक पुलिस जांच के बाद, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने घटना के लगभग दो साल बाद इसकी सी.बी.आई. जांच के आदेश दिए (देखें परिशिष्ट 1 कालक्रम)। अधिसूचित, खानाबदोश, अर्द्ध–घुमन्तु जनजाति आयोग की एक रपट, जिसमें राज्य के अधिकारियों और राजनेताओं को दोषी ठहराया गया है, के बावजूद, घटना के दो साल बाद जांच शुरू हुई। आयोग की रपट को घटना के दो महीने बाद जारी किया गया था। तथापि, सी.बी.आई. के भ्रष्टाचार और स्थानीय ताकती तंत्रों के साथ सम्पर्कों ने यह सुनिश्चित किया कि पारधीढाना के विस्थापित रहवासी न सिर्फ न्याय से वंचित रहें बल्कि पुनर्वास से भी। सी.बी.आई. केवल यह तर्क ही नहीं देती है कि पारधियों का विस्थापन, एक स्थानीय किसान महिला के बलात्कार व हत्या का बदला लेने के लिए बहुसंख्यक समुदाय द्वारा उचित समझकर की गई प्रतिशोधपूर्ण कार्यवाही थी, बल्कि यह पूरी प्रशासनिक मशीनरी को निर्दोष भी ठहराती है।

सी.बी.आई. जांच आरोप पत्र इलाके के कई प्रमुख नेताओं और ग्राम पंचायत के अधिकारियों सहित 82 आरोपियों को सूचीबद्ध करते हैं लेकिन किसी भी प्रशासनिक अधिकारी का उल्लेख तक नहीं करते। किसी के भी खिलाफ अनुसूचित जाति व जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम के तहत मामला दर्ज नहीं किया गया था। इसकी बजाय सभी मामले दंगे, 'शरारत' और विध्वंस से सम्बन्धित हैं। अंततः, चूंकि सी.बी.आई. ने किसी भी आरोपी को गिरफ्तार करने से इन्कार कर दिया था, आरोपियों ने इस अवसर का फायदा उठाकर पुलिस के सामने 'आत्मसमर्पण' कर दिया। जहां राजनेता सुखदेव पानसे और राजा पवार ने रैलियां निकालकर मुलताई को 'बाहरी' पारधियों से मुक्त कराने की अपनी प्रतिबद्धता का दावा किया, वहीं पुलिस ने मुलताई थाने में उनके प्रवास को आरामदायक बनाने का प्रबन्ध किया।

जांच के दौरान जो बात खुलकर सामने आई, वह थी विभिन्न स्तरों पर पितृसत्ता का संचालन, जो कि बहुमत या सीमान्त समाज से सम्बन्धित हरेक महिला को चुप करा देती है। जहां अनसुइयाबाई के जघन्य बलात्कार व हत्या ने पारधीढाना के विध्वंस के मामले को उचित ठहराया, वहीं पारधी महिलाओं के बलात्कार व हत्या का मामला योजनाबद्ध तरीके से नज़रअंदाज़ कर दिया गया। अपने आरोप पत्र में सी.बी.आई. ने डोडेलबाई के सामूहिक बलात्कार और दस विस्थापित महिलाओं के सामूहिक बलात्कारों को अनदेखा करने हेतु पारधियों के बयानों को पूरी तरह से छोड़ दिया और दावा किया कि कोर्ट ने केवल विध्वंस की घटना की जांच के लिए कहा था न कि बलात्कार की जांच के लिए। इससे भी दयनीय बात यह है कि विस्थापित पारधी समुदाय की महिलाएं दोतरफा हिंसा की शिकार हैं: न केवल उनके साथ सामूहिक बलात्कार किया गया बल्कि पारधी पंचायत ने अपने समुदाय का 'सम्मान' खोने के कारण उनका बहिष्कार भी कर दिया।

एक तरफ प्रशासन ने लाचारी में अपने हाथ खींच लिए हैं क्योंकि वे स्थानीय प्रमुख जातियों के वर्चस्व पर सवाल खड़ा नहीं करना चाहते हैं। दूसरी तरफ पुलिस एवं जांच एजेन्सियां खुले तौर पर स्थानीय नेताओं का सहयोग कर रही हैं। केवल कानूनी प्रक्रिया ने ही न्याय का कोई मौका प्रदान किया है। इस रपट के प्रेस में जाने तक, सी.बी.आई. अदालत पारधी चश्मदीद गवाहों में से कुछ के बयानों पर फिर से विचार करने वाली है। यह प्रक्रिया पारधीढाना के विस्थापित रहवासियों के लिए पुनर्वास और न्याय की राह में कहां तक कामयाब होगी यह तो कोई भी अनुमान नहीं लगा सकता है।

***

डोडेलबाई और बोन्द्रु के बच्चे, रामप्यारी व लंगड़, डोडेलबाई के बलात्कार व हत्या एवं बोन्द्रु की हत्या के कई चश्मदीद गवाहों में से दो हैं। इन्होंने पहले–पहल जांच टीम से बात करने से मना कर दिया था। ऐसा इसलिए क्योंकि उन्हें कई बार अपने पीड़ादायक बयानों को दोहराना पड़ा था और जिस जगह अपराध घटित हुआ था वहां कई बार ले जाया गया था। इसके बावजूद, जैसा कि उन्होंने हमें बताया, उनकी आवाज़ें सी.बी.आई. द्वारा आरोप तय करते समय कोई मायने नहीं रखती थीं। जब सामूहिक बलात्कार से पीड़ित महिलाओं ने हमसे बात की, तो उन्हें भी ये जानकारी थी कि जिस दुनिया में वे रहती थीं वहां उनकी आवाज़ें बहुत कम मायने रखती थीं। और जब हमने बैतूल में विस्थापित लोगों से बात की, तो हमें यह बात बार–बार याद आती रही कि कैसे एक लम्बे संघर्ष के बावजूद, न्याय दुर्गम प्रतीत हो रहा था।

यह रपट पारधीढाना के विस्थापित रहवासियों की आवाज़ों को दर्ज करने का एक प्रयास है।

हम मांग करते हैं:

- सभी विस्थापित पारधियों के नुकसान का सही आकलन हो।
- सभी विस्थापित पारधियों को पुनर्वास व मुआवज़ा – पट्टा धारकों को पट्टे दिए जाएं, साथ ही उनके घरों के पुनर्निर्माण के लिए उन्हें आर्थिक सहायता दी जाए, और एक गरिमापूर्ण आमदनी कमाने के लिए हरेक को कृषि योग्य भूमि का प्रावधान और अन्य कौशल मुहैया कराए जाएं।
- पारधीढाना के विध्वंस में मदद करने वाले प्रशासनिक और पुलिस अधिकारियों पर अभियोग लगाया जाए।
- आरोपियों के मुकदमे में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम को शामिल किया जाय।
- पारधीढाना के विध्वंस और इसके रहवासियों के विस्थापन की एक निष्पक्ष जांच हो।
- डोडेलबाई के बलात्कार व हत्या एवं बोन्द्रु की हत्या और विस्थापित पारधीढाना की दस महिलाओं के सामूहिक बलात्कारों के मामलों में उच्च न्यायालय के अध्यादेश के तहत सी.बी.आई. द्वारा एक निष्पक्ष जांच हो।
- उच्च शिक्षा और अन्य सुविधाएं तत्काल प्रभाव से प्रदान की जाएं।

परिशिष्ट 1

कानूनी प्रक्रिया, पुलिस और सी.बी.आई. की जांचें तथा गुमशुदगी की घटनाओं का कालक्रम

2007 के अन्त में: श्रमिक आदिवासी संघ के कार्यकर्ता अनुराग मोदी ने पारधीढाना घटना की जांच करने में पुलिस के विफल रहने के कारण सी.बी.आई. जांच की मांग करते हुए एक जनहित याचिका दायर की।

7 अगस्त 2009: मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने जनहित याचिका पर सुनवाई की। मुख्य न्यायाधीश ए.के. पटनायक और न्यायाधीश अजीत सिंह की पीठ ने सी.बी.आई. को विध्वंस और आगजनी की घटनाओं और बोन्द्रु एवं डोडेलबाई की हत्या के मामले की जांच करने और इसे 'न्यायसंगत निष्कर्ष' तक ले जाने के निर्देश दिए।

जांच का पदभार लेने के बाद सी.बी.आई. ने पारधीढाना की लूट, आगजनी और विध्वंस के मामले में केस क्रमांक RC00082009S0016 तथा बोन्द्रु पारधी और उसकी पत्नी डोडेलबाई की हत्या के मामले में केस क्रमांक RC00082009S0017 दायर किया। हालांकि लूट, आगजनी और हत्या की घटनाओं से पहले 10 सितम्बर 2007 की शाम को पारधी महिलाओं के साथ कथित बलात्कारों के मामले में पीड़ित महिलाओं के बयानों को मौखिक और वीडियो द्वारा दो बार दर्ज करने के बावजूद सी.बी.आई. द्वारा न तो कोई केस दर्ज किया गया, न ही कोई जांच की गई और न ही कोई रपट तैयार की गई।

21 अगस्त 2009: पारधीढाना विध्वंस के मामले में जांच करने के लिए मुलताई पुलिस स्टेशन के थाना इंचार्ज ने सी.बी.आई. में एफ.आई.आर. दर्ज की।

जनवरी 2010: संगीता पारधी और अन्य विस्थापितों ने सी.बी.आई. जांच को तेज़ी से करने की मांग करते हुए एक याचिका दायर की।

10 फरवरी 2011: चौदह साल की राजनंदिनी को बैतूल के मछली बाज़ार से कथित तौर पर वन विभाग अधिकारियों द्वारा उठा लिया गया। अभी तक उसका पता नहीं चल सका है।

15 अप्रैल 2011: बैतूल शहर के निकट स्थित एक चैरिटेबिल शैक्षिक छात्रावास आयुश्री सेवा समिति से विस्थापित पारधियों के दो बच्चे गायब हो गए। इन बच्चों का अभी तक कोई सुराग नहीं मिला है और आज की तारीख तक पुलिस ने इस मामले में कोई तत्परता नहीं दिखाई है।

30 मार्च 2012: लूट, आगजनी और विध्वंस के मामले में सी.बी.आई. जांच अधिकारी एन.के. शर्मा द्वारा जबलपुर जिला न्यायालय की विशेष न्यायिक दंडाधिकारी की अदालत में पहला आरोप पत्र दायर किया गया। इस आरोप पत्र में राजनैतिक नेताओं राजा पवार, संजय यादव, सुखदेव पानसे और सुनीलम सहित 82 आरोपियों के नाम थे। सी.बी.आई. ने पुलिस से एक गिरफ्तारी वारंट मांगा

और तर्क दिया कि एक गंभीर मसला होने के कारण उन्हें लगा कि वे स्वयं आरोपियों को गिरफ्तार नहीं करें। आरोपियों के आत्मसमर्पण के लिए 21 मई 2012 की तारीख तय की गई।

इस आरोप पत्र में डोडेलबाई के कथित बलात्कार और हत्या, बोन्द्रु की कथित हत्या और दस महिलाओं के साथ सामूहिक बलात्कारों के मुद्दे पूरी तरह से गायब थे। महिलाओं के साथ 10 सितम्बर 2007 की शाम को हुए बलात्कारों की मेडीकल जांच होने और वीडियो गवाही सहित गवाहियां दर्ज होने के बावजूद ये हाल है।

10 अप्रैल 2012: जांच अधिकारी द्वारा सी.बी.आई. जबलपुर की विशेष न्यायिक दंडाधिकारी की अदालत में इस मामले में दूसरा और अंतिम आरोप पत्र दायर किया गया। डोडेलबाई और बोन्द्रु की हत्याओं के मामले में एक अभियुक्त को नामज़द किया गया। विस्थापित पारधी चश्मदीद गवाहों के बयानों, जो कि सी.बी.आई. की अंतिम रपट से गायब हैं, के बावजूद इस आरोप पत्र में डोडेलबाई के बलात्कार का कोई उल्लेख नहीं था।

18 जून 2012: जनवरी 2010 में संगीता पारधी व अन्य विस्थापितों द्वारा दायर की गई याचिका को जबलपुर न्यायालय ने यह कहते हुए खारिज कर दिया कि सी.बी.आई. पहले ही अपनी रपट जारी कर चुकी है, अतः इस स्थिति में यह फरियाद करना अप्रासंगिक है।

11 जुलाई 2012: अल्सिया पारधी और कार्यकर्ता अनुराग मोदी द्वारा जबलपुर उच्च न्यायालय में निम्न मामलों में दोबारा से सी.बी.आई. जांच की मांग करते हुए एक याचिका दायर की गई – (क) कथित बलात्कारों के मामले में, जिनमें गवाही और साक्ष्य एकत्रित किए गए थे और (ख) डोडेलबाई के बलात्कार और हत्या और बोन्द्रु की हत्या, जिसमें विस्थापित पारधी चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य लिए गए थे।

28 अगस्त 2012: जुलाई 2012 में अल्सिया पारधी और अनुराग मोदी द्वारा दायर की गई याचिका को न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया।

अगस्त 2012: 30 मार्च 2012 के सी.बी.आई. चालान में नामज़द छह लोगों को पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया। पुलिस ने पत्रकारों को बयान दिया कि कुछ और लोगों को 'पकड़े जाना अभी बाकी है'। (*द हिंदु*, 9 अक्टूबर 2012)

1 अक्टूबर 2012: वकील राघवेन्द्र कुमार के साथ मिलकर अल्सिया पारधी ने जबलपुर उच्च न्यायालय में कथित बलात्कारों और साक्ष्यों के गायब होने और सी.बी.आई. की अंतिम रपट के सुनियोजित पक्षपात के बारे में सी.बी.आई. जांच की मांग करते हुए एक और याचिका दायर की।

8 अक्टूबर 2012: राजनैतिक नेताओं सुखदेव पानसे और राजा पवार सहित 65 लोगों ने बेकाबू सार्वजनिक सभा और रैली में मुलताई पुलिस के सामने आत्मसमर्पण किया। मीडिया समाचारों ने दिखाया कि पुलिस थाने में नेता पुलिसकर्मियों की कुर्सियों पर बैठे थे और उन्हें चाय–नाश्ता कराया जा रहा था।

23 अक्टूबर 2012: जबलपुर के विशेष सत्र न्यायाधीश ने आत्मसमर्पण करने वाले सभी लोगों को ज़मानत पर रिहा कर दिया।

वर्तमान स्थिति: दंड प्रकिया संहिता की धारा 190/173(8)/156(3) के तहत एक आवेदन किया गया जिसमें प्रशासन के अधिकारियों और पुलिस व साथ ही राजनेताओं के खिलाफ उकसाने, षड़यंत्र करने, कर्तव्य में चूक और सक्रिय रूप से भाग लेने के अपराध पर संज्ञान लेने; डोडेलबाई के बलात्कार और हत्या, उसके पति बोन्द्रु की हत्या के मामले में कुछ पुलिस अधिकारियों और राजनैतिक नेताओं के खिलाफ अपराध का संज्ञान लेने और दस पारधी महिलाओं के साथ सामूहिक बलात्कार के मामले की जांच करने की मांग की गई। 11 फरवरी 2013 को यह आवेदन खारिज कर दिया गया और मामला जबलपुर में सी.बी.आई. के विशेष सत्र न्यायालय के विचार के लिए भेज दिया गया। दोनों ही मामलों में अभियुक्तों को जबलपुर के सी.बी.आई. के विशेष सत्र न्यायालय द्वारा ज़मानत दे दी गई।

वर्तमान में लूट, आगजनी और विध्वंस का मामला जबलपुर के विशेष सी.बी.आई. न्यायालय के प्रथम अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के समक्ष (सत्र मुकदमा संख्या 617/2012, सी.बी.आई. बनाम हीरालाल लोखंडे व 89 अन्य) आरोपों को तय करने से पहले बहसों के लिए लंबित है।

उपरोक्त मामले में जबलपुर के सी.बी.आई. के विशेष सत्र न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 193/173(8) के तहत आवेदन किया गया है जिसमें प्रशासनिक व पुलिस अधिकरियों और कुछ राजनैतिक नेताओं के खिलाफ उकसाने, षड़यंत्र करने, कर्तव्य में चूक और सक्रिय रूप से भाग लेने के अपराध पर संज्ञान लेने और इसके बाद आगे की जांच करने की मांग की गई है। यह आवेदन भी रंजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य (AIR 1998 SC 318 = (1998) 7 SCC 149) मामले में दिए गए निर्णय के आधार पर सुप्रीम कोर्ट द्वारा यह कहते हुए रद्द कर दिया गया कि सत्र न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 193 पर संज्ञान लेने का कोई अधिकार नहीं है। मध्य प्रदेश के जबलपुर उच्च न्यायालय के समक्ष उपर्युक्त रद्द कर दिए जाने के आदेश के खिलाफ आपराधिक संशोधन दायर किया गया है।

बोन्द्रु और डोडेलबाई की हत्या के केस क्रमांक RC00082009S0017 में जबलपुर के सी.बी.आई. के विशेष न्यायाधीश के समक्ष अंतिम रपट भी पेश कर दी गई है और इस मामले को एक नया नम्बर केस क्रमांक 3302/2012 (सी.बी.आई., भोपाल बनाम हीरालाल लोखंडे व अन्य) दिया गया है। वर्तमान में यह मामला सत्र मुकदमा संख्या 486/2012 (सी.बी.आई. बनाम नामदेव धाकड़ व अन्य) के तहत जबलपुर की सी.बी.आई. के विशेष सत्र न्यायाधीश के समक्ष कार्यवाही के लिए लंबित है और गवाहों का परीक्षण चल रहा है।

उपरोक्त मामले में धारा 173(8) के तहत एक आवेदन सी.बी.आई. के विशेष सत्र न्यायाधीश के समक्ष दाखिल किया गया है जिसमें बोन्द्रु और डोडेलबाई की हत्या के मामले में कुछ राजनैतिक नेताओं और पुलिस अधिकारियों के खिलाफ अपराध पर संज्ञान लेने और इस मामले में प्रमुख गवाहों, मृतकों के बेटा, बेटी और पारधी समुदाय के सदस्यों के बयानों के आधार पर पुनः जांच

करने की मांग की गई है। ये लोग हत्याओं के चश्मीदीद गवाह हैं और इनके बयानों को सी.बी.आई. की अंतिम रपट में शामिल नहीं किया गया है। फिर से जांच करने के आवेदन को खारिज कर दिया गया है। हालांकि अंतिम रपट के साथ जांच डायरी संलग्न करने का आदेश पारित किया गया है। यह मामला जांच डायरी में पारधी चश्मदीद गवाहों के दर्ज किए गए बयानों के परीक्षण और आगे की कार्यवाही के लिए लंबित है।

सी.बी.आई. द्वारा पीड़ितों के बयानों को मौखिक और वीडियो के बतौर दर्ज कर लिए जाने के बावजूद कथित सामूहिक बलात्कारों के मुद्दे पर जांच नहीं की गई है। बोन्द्रु हत्या मामले में अंतिम रपट एक गवाह, एसडीओपी कमल मौर्य को यह कहते हुए दिखाती है कि बलात्कार मामले की जांच पहले ही की जा चुकी थी और जांच रपट बैतूल ज़िले के तत्कालीन एसपी को सौंप दी गई थी। राष्ट्रीय अधिसूचित जनजाति आयोग की रपट पर कोई संज्ञान नहीं लिया गया और न ही आयोग से बयान ढूंढने और गवाह व साक्ष्यों को दर्ज करने की कोई कोशिश की गई।

इसी बीच, राजनंदिनी के वकील बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका (हेबियस कॉपर्स) को भारत के उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करने का इंतज़ार कर रहे हैं ताकि इसकी सुनवाई के लिए एक तारीख मुकम्मल हो सके।

परिशिष्ट 2

डॉ. मीना राधाकृष्णा द्वारा तैयार 'पारधियों से सम्बन्धित घटना की रपट, मध्य प्रदेश, 9 से 11 सितम्बर 2007, अधिसूचित, घुमन्तु और अर्द्ध–घुमन्तु जनजाति आयोग' के कुछ अंश

आयोग की ओर से श्री बालकृष्णा रेंके (अध्यक्ष), श्री लक्ष्मीभाई पाटनी (सदस्य) और डॉ. मीना राधकृष्णा (अनुसंधान निदेशक) 29 से 30 सितम्बर 2007 तक मध्य प्रदेश के बैतूल ज़िले के दौरे पर थे। इस दौरान इन्होंने 9 से 11 सितम्बर 2007 के बीच हुई पारधियों से जुड़ी घटनाओं और उसके बाद की स्थिति की जांच–पड़ताल की।

बैतूल प्रशासन द्वारा प्रस्तावित पुनर्वास पैकेज को आयोग ने खारिज किया

बैतूल कलेक्टर ने आयोग को एक पुनर्वास योजना सौंपी थी। हालिया समाचारों के अनुसार वर्तमान में राज्य में उच्च स्तर पर इस योजना पर चर्चा हो रही है। इस योजना के अनुसार मुलताई तहसील के पूरे पारधी समुदाय को यहां से हटाकर ज़िले में किसी दूसरी जगह पर, जिसे कलेक्टर पहले ही चिन्हित कर चुके हैं, बसाया जाना था। यह प्रस्ताव इस आधार पर टिका हुआ है कि पारधी आपराधिक प्रवृत्ति के 'बाहरी' तत्व हैं और उनकी खुद की सुरक्षा और गांववासियों की सुरक्षा के लिए उन्हें बाकी आबादी से दूर रखना ज़रूरी है। आयोग कई आधारों पर इस पूरी योजना का गम्भीर विरोध करता है:

1. मुलताई तहसील के ग्रामीणों ने अपनी याचिका में यह दावा किया है कि 'महाराष्ट्र के पारधी' सीमा पार से चौथिया बसाहट की आबादी बढ़ा रहे हैं और इसलिए उनका ज़िले के बाहर, यहां तक कि राज्य के बाहर पुनर्वास किया जाना चाहिए।

   आयोग से मिली जानकारी के अनुसार, बैतूल ज़िले में आदिवासी आबादी का 75 प्रतिशत से घटकर 40 प्रतिशत हो जाना, अधिक से अधिक तथाकथित 'बाहरी लोगों के यहां पर आने' और गैर–पारधी, गैर–आदिवासी महाराष्ट्र निवासियों के बैतूल में बसने के कारण है। इस ज़िले में मध्य प्रदेश सरकार द्वारा बड़ी संख्या में सरकारी नौकरियां 'महाराष्ट्र निवासियों' को दी गई हैं। दूसरे शब्दों में, मध्य प्रदेश राज्य खुद ही संवैधानिक रूप से मूल निवासियों और महाराष्ट्र या कहीं अन्य से आए लोगों के बीच भेद नहीं करती है। इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि किसी भी तरह से महाराष्ट्रीय होने की बजाय मध्य प्रदेशीय होने से कोई पवित्रता नहीं जुड़ी है। इसलिए मुलताई के गांववासियों और चुने गए प्रतिनिधियों से बार–बार यह सुनना कि चौथिया गांव के पारधी 'महाराष्ट्र के निवासी' हैं और इसलिए उन्हें चौथिया में वापस आने नहीं देना चाहिए, इस बात में आयोग को कोई दम नहीं दिखाई देता।

2. इसके अतिरिक्त, बैतूल ज़िले के कलेक्टर ने अपनी रपट में निम्न तथ्यों का उल्लेख किया है: 'नवम्बर 2003 में मध्य प्रदेश के अमरावती घाट में बसे पारधियों ने 'माली' महिला (कथित तौर पर) का बलात्कार कर हत्या कर दी थी। इसके प्रतिकार में गांववालों ने तीन पारधी पुरुषों की हत्या कर दी थी और दो पारधी महिलाएं घायल हुई थीं। इस घटना के बाद से इस पारधी गांव की पूरी आबादी को चौथिया पारधीढाना में स्थायी तौर से बसा दिया गया।

   दूसरे शब्दों में, मध्य प्रदेश के स्वयं के पारधियों से ही चौथिया के पारधीढाना की आबादी बढ़ रही है।

3. उपरोक्त तथ्य से यह स्पष्ट है कि प्रशासन तक को ज्ञात है कि चौथिया पारधीढाना में अनेक पारधियों (जो अपराधी नहीं थे बल्कि सामूहिक हिंसा का शिकार थे) ने शरण ली थी। **वे पहले से ही सामूहिक हिंसा का शिकार हो चुके हैं और एक बार पहले भी विस्थापित हो चुके हैं।** एक बार एक उत्तेजित भीड़ की हिंसा का शिकार होने के बाद उन्हें एक बार फिर से हटाना, खास तौर पर तब जब उन्होंने वह अपराध किया ही नहीं जिस वजह से प्रतिकार हुआ और सिर्फ इसलिए कि वे पारधी हैं, घोर अन्याय होगा।

4. कई पीड़ित परिवारों के पास स्थायी पट्टे थे। 1995 में प्रशासन द्वारा 11 पारधियों को पट्टे दिये गये थे। इसे साबित करने के लिए उनके पास कागज़ात भी हैं, हालांकि शायद उनमें से कुछेक के कागज़ात आगजनी और बलवे के कारण उनके घर जल जाने की वजह से नष्ट हो गए। इनमें से कुछ घरों का निर्माण राज्य सरकार द्वारा इंदिरा आवास योजना के तहत हुआ था। अतः **उन्हें उनके वैध निवास से उजाड़ देना असंवैधानिक होगा।**

5. **पारधी समुदाय को इस तरीके से मुख्यधारा समाज से अलग नहीं किया जा सकता।** वैसे भी जहां भी यह समुदाय बसा है हर जगह वे गांव के बाहरी छोर पर हाशिये पर जी रहे हैं। यहां तक कि जो पट्टे प्रशासन ने उन्हें दिए हैं वे बिरले ही गांव की मुख्यधारा के दायरे में आते हैं। ऐसे में अलग जगह पर उनका पुनर्वास करना राज्य और समाज की मुख्यधारा के सदस्यों की मौजूदा सोच और व्यवहारों को ही सही साबित करेगा।

6. कलेक्टर द्वारा चिन्हित की गई जगह (जैसा कि उनकी पुनर्वास योजना में उल्लेखित है), न केवल अलग–थलग है बल्कि उस जगह पर बांग्लादेशी और बर्मा के शरणार्थियों को भी बसाया जा चुका है। **सम्बन्धित पारधी भारत के नागरिक हैं। प्रशासन द्वारा उनके साथ शरणार्थियों के समान व्यवहार किया जाना घोर आपत्ति की बात है।**

7. **प्रशासन का यह व्यवहार जाति आधारित है।** कलेक्टर की योजना केवल विभिन्न जातियों और गांवों के आपराधिक तत्वों को बाहर करने की नहीं बल्कि उन्हें समाज की मुख्यधारा से दूर बसाकर उनमें 'सुधार' करने की है। यह कार्यक्रम केवल मुलताई के पारधियों के लिए है।

8. इसके आगे, इस कार्यक्रम के तहत केवल चौथिया गांव के पारधी ही नहीं बल्कि मुलताई तहसील की पूरी पारधी बसाहटें शामिल हैं। कलेक्टर के प्रस्तावित पुनर्वास कार्यक्रम के तहत चौथिया गांव के पारधियों के साथ–साथ पिसाता, दतोरा और सेंदूरजाना आदि गांवों के पारधियों को भी इन गांवों से हटाकर पुनर्वसित किया जाएगा। **ये प्रस्ताव इसलिए बना है ताकि पूरी मुलताई तहसील को 'पारधी समस्या से मुक्त किया जा सके'** (पुनर्वास योजना, पेज़ 12)। यह एक चौंकाने वाला कथन है और आयोग इसे खारिज करता है।

9. इस पुनर्वास के बाद बाहरी लोगों के यहां आने और पारधियों के यहां से बाहर जाने पर रोक लगाया जाना भी प्रस्तावित है (पेज़ 10)। पुनर्वास इलाके की घेराबंदी की जाएगी और वहां पर पुलिस और होमगार्ड तैनात रहेंगे (पेज़ 11)। दूसरे शब्दों में, **यह एक खुली जेल रहेगी। यह व्यवस्था अंग्रेज़ों द्वारा आपराधिक जनजातियों की बसाहट के लिए बनाए गए आयोग की याद दिलाता है जिसे 1952 में समाप्त कर दिया गया था।**

10. कलेक्टर का एक और भयावह प्रस्ताव है: **पुनर्वास के इस 'मॉडल' के सफल रहने की स्थिति में यह केवल मध्य प्रदेश की बाकी जगहों के लिए ही नहीं बल्कि पूरे देश के 'ऐसे सभी समुदायों' के लिए एक उदाहरण बन सकता है** (पेज़ 7 से 9)।

परिशिष्ट 3

अधिसूचित जनजातियां

अधिसूचित जनजातियां वे समुदाय हैं जिन्हें औपनिवेशिक आपराधिक जनजाति अधिनियम (सीटीए), 1871 के तहत 'आपराधिक' पहचान दी गई। आज़ादी के बाद सन् 1951 में यह अधिनियम निरस्त कर दिया गया और 'आपराधिक' जनजातियों को 'अधिसूचित' के रूप में परिभाषित किया गया।

समाज वैज्ञानिक मीना राधाकृष्णा के अनुसार, आपराधिक जनजाति अधिनियम द्वारा 'अपराधी' के रूप में समूहों के इस तरह के वर्गीकरण ने औपनिवेशिक अधिकारियों द्वारा इन समुदायों पर जबरन काबू करने को संभव बनाया। इसका आशय यह था कि उनके समाजिक–आर्थिक और राजनीतिक ढांचों को तबाह किया गया और इन 'आपराधिक जनजातियों में से कइयों को बंधुआ मज़दूरों में बदल दिया गया। हालांकि यह स्पष्ट है कि 'जनजातियां' क्यों आपराधिक या अधिसूचित थीं और क्यों उन्हें अभी भी हाशिए पर रखा हुआ है का पूरा दोष केवल औपनिवेशिक आपराधिकता वर्गीकरण पर मढ़ना उचित नहीं है। घुमन्तु और अर्द्ध–घुमन्तु समुदाय जाति समाज के हाशिए पर रहे हैं और निश्चित ही कृषि प्रधान और पूर्व–औपनिवेशिक सामन्ती भारत में राज्य सत्ता में नहीं रहे हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि औपनिवेशिक काल से भी पहले 'निम्न' माने जाने वाले घुमन्तु समुदायों के प्रति जातिगत भेदभाव का रवैया था, विशेषकर शुरुआती औपनिवेशिक काल में 'आपराधिक जनजातियों' को 'निम्न जातियों' के तौर पर दर्शाने के प्रमाण मिलते हैं।

लिहाज़ा, जहां औपनिवेशिक सीटीए ने आपराधिक जनजातियों के अलगाव और जबरिया नियंत्रण को संभव बनाया, वहीं मुलताई तहसील के पूर्व कलेक्टर अरूण भट्ट की पारधीढाना के विस्थापित रहवासियों को अलग करने की योजना में भी अलगाव और काबू करने की इसी तरह की प्रशासनिक प्रक्रिया की बू आती है (देखें अध्याय 'विस्थापन और गरीबी')।

अधिसूचित जनजातियों के बारे में प्रशासनिक और सामाजिक पूर्वाग्रहों की अकादमिक और विस्तृत मीडिया दोनों में ही आलोचना होने के बावजूद, इन समुदायों के जीने की परिस्थितियों में न के बराबर बदलाव आया है। अधिसूचित जनजातियों को जंगलों के कम होने की ज्वलंत समस्याओं के साथ ही जंगल की पहुंच पर प्रतिबंध जैसी समस्याओं का भी सामना करना पड़ रहा है, प्राकृतिक संसाधनों के बड़े पैमाने पर हो रहे निजीकरण के प्रभाव की बात तो छोड़ ही दीजिए। नतीजतन उन्हें वैकल्पिक रोज़गारों की ओर जाना पड़ा है और अर्थव्यवस्था में हाशिए पर होने के कारण इनमें से कइयों को जीवित रहने के लिए छोटी–मोटी आपराधिक गतिविधियों में शामिल होना पड़ा है।

पिछले कुछ दशकों से कंगाली से जूझ रहे घुमन्तु समुदायों को शहरों की ओर पलायन करना पड़ा है। हाशियाकरण और गरीबी के कारण इस पलायन का मतलब है और कंगाली की तरफ जाना। साथ ही, राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक जैसे राज्यों

में अधिसूचित जनजातियों का अधिसूचित, अनुसूचित जनजाति, अनसूचित जाति, और अन्य पिछड़ी जातियों में असमान वर्गीकरण होने के कारण इस हाशियाकृत घुमन्तु समुदाय को विकास योजनाओं का लाभ लेने में मुश्किल आ रही है (देखें परिशिष्ट 4 'पारधी')।

सराहनीय कदम उठाते हुए, इन समुदायों के विकास के लिए विशेष प्रावधान उपलब्ध कराने के उद्देश्यों से बालकृष्णा रेंके की अगुवाई में सन् 2005 में अधिसूचित, घुमन्तु और अर्द्ध–घुमन्तु जनजातियों के लिए एक राष्ट्रीय आयोग गठित किया गया। हालांकि आयोग ने 2008 में केन्द्रीय केबिनेट को अनुशंसा भेजी थी जो तब से यूं ही पड़ी हुई है। आयोग का आकलन था कि इन वर्गों में शामिल लोगों की संख्या लगभग 11 करोड़ थी।

परिशिष्ट 4

पारधी

पारधी समुदाय में अनेकों घुमन्तु और अर्द्ध–घुमन्तु समूह शामिल हैं। ये समूह भारतीय उपमहाद्वीप के पश्चिमी और मध्य भाग में राजस्थान से कर्नाटक तक फैले हुए हैं। राज पारधी लोग अपना उद्‌भव राजपूताना से होने का दावा करते हैं जबकि पानसे या महादेव पारधी लोग अपनी उत्पत्ति कक्ष से हुई मानते हैं। भौगोलिक रूप से फैले होने के कारण पारधियों के विभिन्न समूह गोंडी, हलबी, गुजराती, मराठी और हिन्दी से मिलीजुली भाषा बोलते हैं। अधिकांश पारधी इनमें से एक आधुनिक भाषा में बातचीत करने में कुशल हैं।

पारधियों के कई उपसमूह भी हैं, जैसेकि गई पारधी, पानसे पारधी इत्यादि। इन सभी उपसमूहों की अपनी पंचायतें हैं। सभी पंचायतें पुरुष पंचायतें हैं और पितृसत्ता के नियमों के अनुसार अपना आंतरिक नियम–कानून चलाती हैं। सज़ा के बतौर भारी जुर्माना देना होता है और समुदाय से बाहर कर दिया जाता है।

पारधी उपसमूहों के नाम अक्सर उनके व्यवसायों के अनुसार होतें हैं और ये उपसमूह कई विजातीय विवाह करने वाले पितृवंशीय प्रजातियों से मिलकर बनते हैं। 'हिन्दू' जातिक्रम के आधार पर पारधी हाशिए पर हैं। लेकिन सारे घुमन्तु समुदायों के साथ, वन उत्पादों को लानेवालों के तौर पर वे विशाल पूर्व–औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा रहे हैं। उदाहरण के लिए, बैतूल में विस्थापित होकर आए पानसे पारधी समूह को ही लें, महिलाओं से भीख के द्वारा नगद रुपया कमाने के निचले दर्जे के काम की अपेक्षा की जाती है जबकि पुरुष तीतर या जंगली बटेर पकड़ने के पारम्परिक काम को प्राथमिकता देते हैं। हालांकि, वन विभाग के अधिकारियों और पुलिस की ज़बरदस्त निगरानी और प्रताणनाओं का सामना करने के कारण लुकछुपकर काम करने की वजह से उनके पारम्परिक कामों को भूमिगत गतिविधि माना जाता है। (अध्याय 'औरतों का शरीर जंग का मैदान' में राजनंदिनी का मामला देखें। राजनंदिनी को वन विभाग के अधिकारियों ने बाज़ार में छापे की कार्यवाही के दौरान कथित तौर पर तब उठाया था जब वह जंगली बटेर बेच रही थी।)

आपराधिक जनजाति अधिनियम, 1951 के निरस्त हो जाने के बावजूद भी पारधियों के कई समूहों को कुछ भागों में असमान रूप से श्रेणीबद्ध किया गया है जबकि दूसरों को नहीं। दूसरे शब्दों में, औपनिवेशिक काल में एक सीमांत व दरिद्र समुदाय होने के बावजूद, आज़ादी के बाद भी पारधी समुदाय की स्थिति देखें तो न केवल उनके खिलाफ सामाजिक पूर्वाग्रह लगातार बने रहे हैं बल्कि वे प्रशासनिक उदासीनता का भी शिकार हुए हैं जो कि इस देश में गरीब के लिए उपलब्ध सभी सरकारी कार्यक्रमों का हाल है।

उदाहरण के तौर पर, महाराष्ट्र, गुजरात और कर्नाटक में पारधी अनुसूचित जनजाति और अधिसूचित माने जाते हैं। मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के कुछ ज़िलों में पारधी अनुसूचित जनजातियां हैं तो मध्य प्रदेश के कुछ ज़िलों में अनुसूचित जातियां। आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र के कुछ हिस्सों में पारधियों के कुछ उपसमूह अन्य पिछड़े वर्ग में आते हैं। 1990 की शुरुआत में भारत सरकार द्वारा वित्त पोषित नृवैज्ञानिक सर्वे ऑफ इंडिया द्वारा बनाई गई 'पीपुल ऑफ इंडिया सीरीज', जिसका उद्देश्य प्रशासनिक मामलों में मदद करना था, में पारधियों को अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति, दोनों ही खंडों में रखा गया है। अनुसूचित जनजाति खंड में जलगांव और धूले ज़िलों के पारधियों को विजातीय विवाह करने वाले और प्रतीकों की पूजा करने वाले समूह के रूप में बताया गया है। अनुसूचित जाति खंड में उन्हें मध्य प्रदेश का रहने वाला बताया गया है, जहां वे आधिकारिक तौर पर अनुसूचित जाति वर्ग के रूप में सूचीबद्ध हैं और उन्हें निम्न जाति का हिन्दू बताया गया है जो हिन्दू देवी–देवताओं की पूजा करते हैं और केवल चमार व भंगी ही इस समुदाय के साथ खान–पान का सम्बन्ध रखते हैं।

आज़ादी के बाद उनके वर्गीकरण में इस तरह के घपलों के कारण दो चीज़ें हुई हैं। एक तरफ, ऐसे वंचित समुदायों की सांस्कृतिक, राजनीतिक और सामाजिक–आर्थिक जटिलताएं गलत ढंग से प्रस्तुत हुई हैं। पारधीढाना के विस्थापित रहवासियों का ही मामला लें। इस समूह ने एक काफी शांत किसानी जीवनशैली अपनाने की कोशिश की। यहां तक कि आधुनिक जीवन के व्यवसायों जैसे, टैक्सी चलाना और छोटी–मोटी रोज़मर्रा की ज़रूरत की चीज़ों के थोक व्यापार आदि का काम भी अपनाया। बहुत से विस्थाापित रहवासियों ने जांच दल को बताया कि बहुसंख्यक समुदाय इस बात से चिढ़ता था कि वे अपनी ही शर्तों पर विकास का लाभ ले रहे थे। सच्चाई यह है कि पारधियों को विस्थापित करना दरअसल उन्हें कंगाली की ओर धकेलने की एक कोशिश है, जो कि निम्न तथ्यों से जाहिर होती हैः पारधीढाना के चौथिया ग्राम पंचायत का निर्वाचन क्षेत्र बन जाने के बाद, पारधीढाना के रहवासियों के प्रशासन में शामिल होने से उस इलाके में एक प्राथमिक स्कूल खुल सका जहां कि लड़के और लड़कियां दोनों पढ़ने आते थे। एक समुदाय जहां मासिक धर्म आने पर लड़कियों की शादी कर देने का रिवाज़ है, वहां उनकी शिक्षा एक बदलाव की तरह थी। हालांकि, इस विस्थापन की वजह से फिर से पहली जैसी स्थिति हो गई है, जहां केवल वही लड़के स्कूल जा पाएंगे जिनके माता–पिता के पास अपने लड़कों को स्कूल भेजने के लिए न्यूनतम संसाधन होंगे।

वर्गीकरण में इस तरह के भ्रम का एक दूसरा समस्यामूलक पहलू यह है कि इस समुदाय के घुमन्तु होने पर कभी विचार ही नहीं किया गया है। मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों में घुमन्तु लोगों के लिए *कोई* प्रशासनिक दर्जा है ही नहीं। मुलताई तहसील में वे किसी भी विशेष प्रशासनिक श्रेणी का हिस्सा नहीं हैं। हालांकि, बैतूल ज़िले की बाकी तहसीलों में पारधी उपसमूहों को अनुसूचित जनजाति की सूची में रखा गया है! इस गड़बड़ी का मतलब है कि राज्य और केन्द्र, दोनों सरकारों के सामाजिक न्याय और सशक्तीकरण मंत्रालय ने वित्त की कमी का हवाला देते

हुए विस्थापित पारधियों के कल्याण से हाथ झाड़ लिए हैं क्योंकि एक तरफ तो अपने विस्थापन के बाद वे बैतूल में थे, जबकि उनका उद्‌भव स्थल यानी कि विस्थापन का स्थान मुलताई था।

2010 में टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंस द्वारा मुम्बई शहर के प्रवासी पारधियों पर किया गया शोध व्यक्त करता था कि प्रवासी पारधियों और बैतूल के पारधीढाना के विस्थापित रहवासियों में कैसी समानताएं हैं। मुम्बई के एक सर्वे ने यह भी बताया कि किस तरह प्रवासी पारधियों के लिए नागरिकता के पैमाने जैसे पैनकार्ड, वोटर कार्ड और जाति प्रमाण पत्र को पाना असम्भव–सा होता था। वे लगातार पुलिस की निगरानी में होते थे और उन्हें अन्य छोटे अपराधों के साथ 'भीख मांगने' के लिए भी दोषी ठहराया जाता था। शिक्षा प्राप्त करने के अवसर बहुत कम थे। वे एक झुग्गी पुनर्वास योजना से बाहर कर दिए जाने के शिकार थे, जिसमें कि प्रवासी निर्माण मज़दूरों और बड़े पैमाने पर निरक्षरों से 1995 से निवास करने का प्रमाण मांगा गया था।

अधिसूचित समूह जैसे कि पारधियों के कल्याण का काम घोंघे की चाल से आगे बढ़ रहा है। पारधियों की विशेष परिस्थितियों के प्रति प्रशासनिक लापरवाही बड़ी दुखदाई है। अपराध से दूर होने पर भी वे 'अपराधी' होने के आरोप से पीड़ित हैं। जाति आधारित दर्जों और गरीबी के कारण होने वाले भेदभावों के माहौल में केन्द्र सरकार उनकी विशेष ज़रूरतों के प्रति उदासीन रही है (अधिसूचित, घुमन्तु और अर्द्ध–घुमन्तु जनजातियों के राष्ट्रीय आयोग के संदर्भ के लिए परिशिष्ट 'अधिसूचित जनजातियां' देखें)।

परिशिष्ट 5

पारधियों के वर्गीकरण की गड़बड़ी

पारधियों के अधिसूचित जनजाति होने के कारण उनके इस तरह के गड़बड़ वर्गीकरण का पता छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक में देखा जा सकता है। इस रपट के उद्देश्य हेतु, मध्य प्रदेश के संदर्भ में गड़बड़ वर्गीकरण को समझना फायदेमंद होगा।

मध्य प्रदेश में पारधियों को निम्न वर्गों में बांटा गया हैः

अनुसूचित जातियों के रूप मेंः भिंड, धार, गुना, देवास, ग्वालियर, इंदौर, झाबुआ, खरगौन, मंदसौर, मुरैना, राजगढ़, रतलाम, शाजापुर, शिवपुरी, उज्जैन और विदिशा ज़िले।

अनुसूचित जनजातियों के तौर पर पारधियों के कुछ उप–समूहः छिंदवाड़ा, मंडला, सिवनी और नरसिंहपुर ज़िले, बालाघाट ज़िले की बेहर तहसील, बैतूल ज़िले की बैतूल और भैंसदेही तहसील, जबलपुर ज़िले की गुडवारा, पाटन और सिन्हारा तहसील, होशंगाबाद ज़िले की होशंगाबाद और सोहागपुर तहसील, खंडवा ज़िले की हरसूद तहसील।

एक तो इस तरह के वर्गीकरण से एक घुमन्तु समुदाय को बिना उनकी जानकारी के किसी खास इलाके से सम्बद्ध कर दिया जाता है। पर इस तथ्य के अलावा यह भी बात है सन् 2002 में मीणा और कीर समुदाय के साथ–साथ साधारण समूह 'पारधियों' को भी संवैधानिक अनुसूचित जनजातियों की सूची में से भोपाल, रायसेन और सीहोर ज़िलों के लाभ पाने वाले समूहों से हटा दिया गया है।

पारधियों के कई उप–समूह अभी भी मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों में अनुसूचित जनजातियों में आते हैं। जबकि पारधियों की सामान्य श्रेणी को भोपाल, रायसेन और सीहोर ज़िलों में हाशियाकृत होने के बावजूद किसी भी तरह की प्रशासनिक सहायता से वंचित कर दिया गया है।

इसका अर्थ यह है कि पारधियों को लाभ तभी मिल सकता है जब वे अपने उप–समूह की मान्यता और उन ज़िलों का प्रमाण साबित कर दें जहां वे अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों में आते हैं। यह जानते हुए भी कि पारधी समुदाय के बहुत से लोग पिछली पीढ़ी तक घुमन्तु और हाशिए पर जीते रहे हैं, उनके पास ज़मीन नहीं रहीं और उनमें से अधिकांश निरक्षर हैं, उनसे उपरोक्त अपेक्षा करना ज़्यादती है।

भोपाल स्थित राज्य जनजाति अनुसंधान संस्थान, आदिम जनजाति अनुसंधान एवं विकास संस्थान का निरन्तर यह मत रहा है कि पारधियों को राज्य में हर जगह अनुसूचित जनजाति का दर्जा दिया जाना चाहिए क्योंकि ऐसा माना जाता है कि इस समुदाय का विकास गोंड आदिवासियों से हुआ है और ये आदिवासी रीतिरिवाज़ों को मानते हैं।

जनजाति कल्याण मंत्रालय की सामाजिक न्याय और सशक्तीकरण की स्टेंडिंग कमेटी ने 2011–12 में एक सकारात्मक कदम उठाते हुए लोकसभा में एक रपट पेश की कि राज्य सरकार

ने मीणा, कीर और पारधियों को फिर से अनुसूचित जनजातियों की सूची में शामिल करने की अनुशंसा की है। यह अभी भी स्पष्ट नहीं है कि क्या वे पारधियों को केवल भोपाल, रायसेन और सीहोर ज़िलों में अनुसूचित जनजाति घोषित करने की बात कह रहे हैं या कि पूरे मध्य प्रदेश में।

हालांकि, सूची में फिर से शामिल करना एक लंबी प्रशासनिक प्रक्रिया है।

अनुसूचित जातियों और जनजातियों की संवैधानिक सूची में किसी भी समूह को शामिल करना, बाहर करना या स्थिति को परिवर्तित करना मंत्रियों की केन्द्रीय केबिनेट द्वारा पारित संशोधित कानून के द्वारा होता है। ऐसा होने लिए राज्य सरकारों, भारत के पंजीयक निदेशक (आरजीआई) और अनुसूचित जाति और जनजाति राष्ट्रीय आयोग (एनसीएससीएसटी) सभी को, शामिल करने, बाहर करने या परिवर्तन करने के पक्ष में होना चाहिए। प्रवासी जातियों और जनजातियों के मामलों में भी विभिन्न राज्य सूचियों में परिवर्तन करने के लिए यही प्रक्रिया अपनायी जाती है।

एनसीएससीएसटी को कोई भी परिवर्तन करने के लिए आरजीआई, राज्य सरकारों और भारत नृविज्ञान सर्वेक्षण से प्राप्त सूचनाओं के साथ–साथ व्यक्ति विशेषज्ञों, संगठनों और सामाजिक वैज्ञानिकों की राय लेनी होती है। एनसीएससीएसटी को जनसुनवाई भी आयोजित करनी होती है।

यदि आरजीआई शामिल करने, बाहर करने या परिवर्तन करने के राज्य सरकारों के अनुरोधों को अस्वीकार कर देता है तो केन्द्रीय सरकार की ओर से यह अपने आप ही अस्वीकार हो जाएगा। कोर्ट द्वारा एनसीएससीएसटी को किसी परिवर्तन को मंजूर करने के आदेश दिए जाने के अलावा इस प्रक्रिया की कोई समय–सीमा नहीं है। इस प्रकार, आरजीआई और राज्य सरकारें इस तरह के परिवर्तन करने की प्रक्रिया के लिए जितना चाहें उतना लंबा समय ले सकती हैं।

स्टेंडिंग कमेटी (जिसका ज़िक्र उपर्युक्त पैरा में हुआ है) ने पारधियों, मीणाओं और कीरों को सूचियों में फिर से शामिल करने के मामले को 19 सितम्बर 2011 को आरजीआई के हवाले कर दिया था, जहां वह अभी भी लंबित पड़ा हुआ है।

(प्रशासनिक प्रक्रियात्मक विवरण का स्रोत है – 'अनुसूचित जाति और जनजाति सूचियों के निर्दिष्ट आदेशों में शामिल करने, सूची से बाहर करने और अन्य संशोधन करने हेतु निर्णय लेने के लिए दावा करने के तौर–तरीके' वाला दस्तावेज़। इस दस्तावेज़ में, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अल्पसंख्यकों पर मंत्रिमंडलीय कमेटी की 15 जून 1999 को हुई मीटिंग में क्या मंजूरी दी गई है और 25 जून 2012 को उसी कमेटी ने क्या संशोधन पारित किया है, प्रकाशित किया गया है।)

पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स

'पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स' (पीयूडीआर), दिल्ली लोगों के नागरिक और लोकतांत्रिक अधिकारों के पक्ष में आवाज़ उठाने वाली एक स्वायत्त संस्था है जो 1976–77 से काम कर रही है। पिछले तीन दशकों के दौरान संस्था ने देश भर में घटित नागरिक अधिकारों के हनन के सैकड़ों मामलों पर कार्यवाही की है। लोगों के अधिकारों के हनन के मामलों में पीयूडीआर जांच करती है, बयान जारी करती है, पर्चे बांटती है, सार्वजनिक सभाएं, धरने व प्रदर्शन आयोजित करती है और कानूनी लड़ाई भी लड़ती है। पीयूडीआर जनतांत्रिक अधिकारों को प्रभावित करने वाले मुद्दों जैसे– जेण्डर समानता, वन नीति और वनवासियों के अधिकार, मज़दूरों के अधिकार, कृषि समस्या, जातिगत शोषण, पुलिस हिरासत में यातना, बलात्कार या मृत्यु आदि पर भी अभियान, प्रकाशन और कानूनी कार्यवाही करती है।

राजकीय दमन व लैंगिक हिंसा के विरुद्ध महिलाएं

'राजकीय दमन व लैंगिक हिंसा के विरुद्ध महिलाएं' (डब्ल्यूएसएस) अक्टूबर 2009 में गठित एक गैर–अनुदान प्राप्त ज़मीनी प्रयास है। इस अभियान का मकसद है – हमारे शरीर व हमारे समाज पर हो रही हिंसा को खत्म करना। हमारा नेटवर्क पूरे देश में फैला हुआ है और इसमें शामिल हम औरतें अनेक राजनीतिक परिपाटियों, जन संगठनों, नारी संगठनों, छात्र व युवा संगठनों, नागरिक अधिकार संगठनों एवं व्यक्तिगत स्तर पर हिंसा व दमन के खिलाफ सक्रिय हैं। हम हर प्रकार के राजकीय दमन का विरोध करते हैं और औरतों व लड़कियों के विरुद्ध किसी भी अपराधी/अपराधियों द्वारा की जा रही लैंगिक हिंसा के खिलाफ हैं।

संपर्क – राजकीय दमन व लैंगिक हिंसा के विरुद्ध महिलाएं
द्वारा – कल्पना मेहता, 43, साकेत, इन्दौर 452018
ई–मेलः againstsexualviolence@gmail.com